****

अध्याय ·5·

मुद्राराक्षस के असंगत नाटक : नाट्य-शिल्प

****

अध्याय : 5

मुद्राराक्षस के असंगत नाटक : नाट्य-शिल्प

भूमिका -

नाटक में नाटककार का जीवन-दर्शन, चिंतन तथा विषयवस्तु शिल्प के माध्यम से ही अभिव्यक्ति पाते हैं। अतः नाटक में शिल्प-विधि का अपना विशिष्ट और महत्त्वपूर्ण स्थान है। साहित्य के अन्य रूपों की तरह नाटक के लिए भी रूप, आकार तथा रचना की आवश्यकता होती है और यह कार्य शिल्प-विधि के द्वारा सम्पन्न कराया जाता है। वास्तव में शिल्प-विधि शब्द अंग्रेजी के "टेकनीक" शब्द का रूपांतर है। डॉ॰शांति मलिक के अनुसार टेकनीक का सरल एवं स्पष्ट अर्थ है- कला के विभिन्न उपकरणों की योजना का वह विधान, वह प्रक्रिया, वह ढंग व वह तरीका जिसके माध्यम से नाटककार अपनी अमूर्त अनुभूति व विचारधारा को नाटक के रूप में सर्वथा स्पष्ट, मूर्त, व्यवस्थित एवं निश्चित रूप प्रदान करता है, अर्थात् अस्पष्ट आत्मानुभूति को स्पष्ट, सुन्दर एवं प्रभावपूर्ण अभिव्यक्ति देकर अपने लक्ष्य की पूर्ति में सफल होता है।[1] दूसरे शब्दों में हम कह सकते हैं कि वस्तुतः नाटक का कलापक्ष ही नाटक का शिल्प-पक्ष या शिल्प-विधि है। डॉ॰उषा सक्सेना के अनुसार हिन्दी में शिल्प शब्द का अर्थ है कारीगरी तथा विधि का अर्थ है प्रणाली।[2] नाटक की शिल्प-विधि के अंतर्गत वे समस्त तत्त्व आ जाते हैं जो नाटक के रूप का निर्माण करते हैं। नाटक को आकार देने वाले शिल्प-विधि के वे तत्त्व हैं- 1· वस्तुविन्यास 2· पात्र और चरित्र-चित्रण, 3· संवाद शिल्प, 4· भाषाशैली शिल्प, 5· गीत एवं संगीत योजना, 6· विम्ब एवं प्रतीक योजना, 7· शीर्षकों के अभिनव प्रयोग।

हिन्दी के परम्परागत और असंगत नाटकों की शिल्प-विधि में पर्याप्त अंतर है, जिस पर हम प्रबंध के प्रथम अध्याय में "असंगत नाटक : सैद्धांतिक विवेचन" शीर्षक के अंतर्गत पर्याप्त प्रकाश डाल चुके हैं। मुद्राराक्षस के नाटक मुख्यतया "ऐब्सर्ड" नाट्य-शिल्प के अनुसार लिखे गये हैं। "मुद्राराक्षस जिस प्रकार की घटनाओं, स्थितियों तथा पात्रों की

पराजित उत्पीडक , सनकपूर्ण विसंगत मनःस्थितियों से अपने नाटकों की रचना करते हैं, उनमें एक ओर हिंसा, सेक्स और आत्महत्या का जोर है; दूसरी ओर शिल्प के स्तर पर फंतासी, अतिनाटकीयता, हास्य-व्यंग्य और बेतुकेपन की भरमार। कथ्य और शिल्प दोनों के स्तर पर वे कुछ ऐसा प्रयोग करते हैं कि उसमें उनके नाटकों की भंगिमा विशेष महत्त्व अर्जित कर लेती है। इसीलिए एक आलोचक ने उन्हें "मुद्राओं का राक्षस" कहा है।"[3] नाट्य-शिल्प की दृष्टि से मुद्राराक्षस के असंगत नाटकों में निम्नलिखित विशेषताएँ पायी जाती हैं-

1· <u>वस्तुविन्यास</u> -

मुद्राराक्षस अपने नाटकों में मनुष्य को असंगत स्थितियों में पेश करते हैं। उनके नाटकों की कथावस्तु अक्सर कोई असंगत स्थिति ही होती है। उनका सारा ध्यान मानवीय नियति की त्रासदी पर लगा रहता है। परिणामस्वरूप नाटक में कथानक का कोई महत्त्व नहीं रह जाता। कथावस्तु बिखरी हुई रहती है। वर्तमान सामाजिक-राजनीतिक विसंगत परिस्थितियों के बीच पीसते-कराहते आज के मनुष्य की असहाय और अर्थहीन स्थिति को यथार्थ रूप में चित्रित करना ही उनके नाटकों का प्रमुख कथ्य है।

आज के जीवन में चारों तरफ व्याप्त बेईमानी, ढोंग और भ्रष्ट स्थिति का चित्रण, सुविधाभोगी उच्च वर्ग के प्रति आक्रोश, प्रशासनिक तंत्र का अमानवीकरण, मृत्युबोध, यांत्रिक जीवन, वितृष्णापूर्ण भय, हिंसा, आंतक, जंगलीपन, काम संबंधों की विकृतियाँ और यौन अभिप्रायों के खुले और आक्रामक प्रयोग उनके वस्तुविन्यास की महत्त्वपूर्ण विशेषताएँ हैं। उनके कुछ नाटकों का वस्तुविन्यास अंको में विभाजित हैं, जैसे, "मरजीवा" और "तिलचट्टा" और कुछ नाटकों में अंक-विभाजन बिल्कुल नहीं है, जैसे, "**योर्स फेथफुली**" और "**तिलचट्टा**"। उनका "**मरजीवा**" पाँच अंको का नाटक हैं, जिनमें से प्रथम तीन अंको का स्थान आदर्श और भूमि का कमरा है तो अंतिम दो अंको का स्थान क्रमशः पुलिस स्टेशन और पार्क है। "**तेन्दुआ**" तीन अंको का नाटक है, जिसका पहला और तीसरा अंक रेनु राय के बंगले के बाहर घटित होता है तो दूसरा अंक बंगले के अन्दर। समय की दृष्टि से भी नाटक की घटनाओं में विशेष अंतर नहीं है। "**मरजीवा**" में दो या तीन दिन की घटनाओं का चित्रण है, तो "**योर्स फेथफुली**" में सरकारी कार्यालय के एक दिन के दिनक्रम का। इसी प्रकार "**तिलचट्टा**" देव और केशी के एक रात्रि की घटनाओं को रूपायित करता है और "तेन्दुआ" में भी केवल एक दिन की घटनाओं का ही वर्णन है।

वस्तु-विन्यास की दृष्टि से मुद्राराक्षस के असंगत नाटकों की यह एक महत्त्वपूर्ण विशेषता है कि उनके नाटक मुख्यतः त्रासद स्थितियों को ही व्यक्त करते हैं। परिणामस्वरूप

नाटक के मुख्य पात्र हत्या या आत्महत्या की यातनाओं को भोगते हुए दिखाई देते हैं। उनके नाटकों में कथावस्तु के जो बिखरे सूत्र प्राप्त होते हैं उसके आधार पर कहा जा सकता हैं कि उनके नाटकों की कथावस्तु सामाजिक, व्यक्तिवादी तथा मनोवैज्ञानिक और यथार्थवादी है। प्रस्तुत प्रबंध के दूसरे अध्याय में "मुद्राराक्षस के असंगत नाटक"उपशीर्षक के अंतर्गत हम उनके नाटकों की कथावस्तु पर सविस्तर प्रकाश डाल चुके हैं।

2· पात्र और चरित्र-चित्रण -

पात्र और चरित्र-चित्रण नाटक के शिल्प-विधान का महत्वपूर्ण पक्ष है। क्योंकि बिना पात्रों के नाटक की रचना ही संभव नहीं है। पात्रों के माध्यम से ही नाटक की कथावस्तु का विकास होता है और नाटककार का जीवन विषयक दृष्टिकोण भी पात्रों के माध्यम से ही स्पष्ट होता है। नाटक "संवादात्मक गद्य विधा" है और संवादों के लिए भी पात्रों की ही आवश्यकता होती है। वस्तुतः पात्र ही वह मूल तत्त्व है, जो नाटक को"नाटक" संज्ञा के काबिल बनाता है। डॉ·रामशंकर त्रिपाठी के अनुसार "पात्र" से तात्पर्य है- काव्य, नाटक, उपन्यास, कहानी आदि में वे व्यक्ति जो तंत्रनिविष्ट कथावस्तु की घटनाओं के घटक होते हैं और जिनके क्रिया-कलाप या चरित्र से कथावस्तु की सृष्टि या परिपाक् होता है। नाटक में वे अभिनेता या नट जो उक्त व्यक्तियों का, वेशभूषा आदि के माध्यम से रूप धारण करके उनके चरित्रों का अभिनय करते हैं, "पात्र" कहलाते हैं।[4]

असंगत नाटकों में नाटककार का ध्यान जीवन की विषमताओं और विसंगतियों के चित्रण द्वारा मानव नियति की त्रासदी उभारने पर होने के कारण पात्र और चरित्र-चित्रण के दृष्टि से ये नाटक पूर्ववर्ती नाटकों से भिन्न हैं।मुद्राराक्षस द्वारा"तिलचट्टा"नाटक के संदर्भ में कही हुई बात उनके सभी नाटकों पर समान रूप से चरितार्थ होती है-"तिलचट्टा"मानवीय नियति की एक ऐसी त्रासदी है जिसे निरंतर अपने मानवीय-ऐतिहासिक आधार की तलाश है। नाटक में चरित्र नहीं यह त्रासदी ही प्रमुख है,सत्य है।प्रारभ से अंत तक यह त्रासदी ही है जो लगातार मंच पर रहती है। बाकी सबकुछ,पात्र,प्रतीक,देश,काल,घटनाएँ सब सिर्फ उसकी वहाँ मौजूदगी को प्रमाणिकता देने वाले दस्तावेज़ है।"[5] स्पष्ट है कि मुद्राराक्षसके नाटकों में पात्र और चरित्र-चित्रण का स्थान गौण ही है।

पात्रों की संख्या -

मुद्राराक्षस के असंगत नाटकों में पात्रों की संख्या सीमित ही दिखाई देती है। "**मरजीवा**" में केवल नौं पात्र हैं, जिनमें से आदर्श, भूमि, मिनिस्टर शिवराज गंधे और पुलिस अफसर चरित्र प्रधान हैं तो आदर्श का बूढ़ा बाप, युवक, पत्रकार, हवलदार तथा चूहेमार व्यक्ति के चरित्र गौण हैं। "**योर्स फेथफुली**" में तो केवल आठ चरित्र हैं। नाटक के सभी

चरित्र वर्ग विशेष के प्रतिनिधि पात्र हैं। "तिलचट्टा" में केवल देव और केशी के चरित्र मुख्य हैं, गौण पात्रों में काला आदमी, पुलिस अफसर, दो सिपाही और पिण्डारी एक तथा पिण्डारी दो हैं। इस नाटक की विशेषता यह है कि इसमें "तिलचट्टा" एक पात्र के रूप में नाटक के कार्य-व्यापार में हिस्सा लेता है। "तेन्दुआ" में पात्रों की कुल संख्या ग्यारह है, जिनमें भूषणराय, रेनु राय और मिसेज मदान उच्च वर्ग के सुविधाभोगी पात्र हैं तो माली, उसकी स्त्री और लड़का 1,2,3,4,5, तथा 6 निम्न वर्ग के पात्र हैं।

पात्रों का वर्गीकरण -

हम यह बात पहले ही स्पष्ट कर चुके हैं कि असंगत नाटकों के पात्र परम्परागत नाटकों से भिन्न होते हैं। अतः स्वाभाविक है कि इन पात्रों का वर्गीकरण भी परम्परागत ढाँचे में नहीं किया जा सकता। मुद्राराक्षस के असंगत नाटकों के पात्रों को हम निम्न वर्गों में विभाजित कर सकते हैं-

मुद्राराक्षस के नाटकों के पात्र

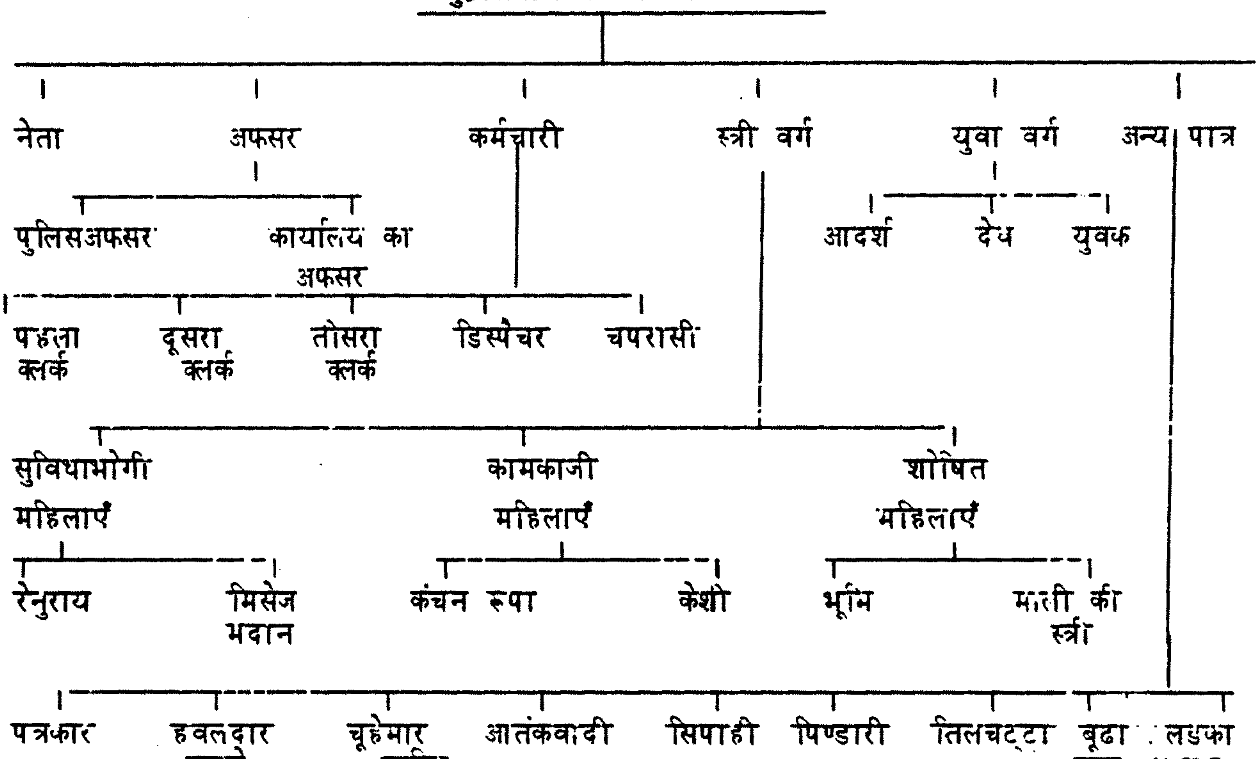

मुद्राराक्षस के पात्रों की विशेषताएँ -

मुद्राराक्षस के नाटकों के उपर्युक्त पात्रों में मुख्यतया निम्नलिखित विशेषताएँ दृष्टिगोचर होती हैं-

1. परम्परागत नाटकों की तरह इन नाटकों में नायक, नायिका और खलनायक नहीं हैं।

2· पात्रों के समग्र जीवन का अंकन नहीं, केवल खंड जीवन ही अंकित हुआ है।

3· ये पात्र परम्परागत जीवन-मूल्यों को ठुकराते हैं।

4· दूसरों की पीड़ा में इन्हें थ्रिल का अनुभव होता है।

5· नेता और अफसर वर्ग के पात्र भ्रष्ट राजनीतिक-सामाजिक व्यवस्था के यांत्रिक पूर्जे हैं, जो हमेशा शोषण में व्यस्त दिखाई देते हैं।

6· सुविधाभोगी महिलाएँ रेनु राय और मिसेज मदान काम-विकृति से पीड़ित हैं।

7· कामकाजी महिलाएँ कंचन रूपा और केशी अपने अफसरों को पूर्णतः समर्पित हैं।

8· शोषित वर्ग की महिलाएँ या तो मारी जाती हैं या फिर केवल मौन विलाप करती रहती हैं।

9· जीवन की असंगतियों को झेल न पाने के कारण कुछ पात्रों का व्यक्तित्व विघटित होकर खंडित बन गया है।

10· पात्रों के कार्य बेहूदे, अनर्गल, असम्बद्ध और निरर्थक हैं।

11· जीवन के नग्न यथार्थ का उद्घाटन करने में ये पात्र समर्थ हैं।

12· नाटक के मुख्य पात्र आत्महत्या में ही राहत पाते हैं।

13· मरी हुई कंचन रूपा की पूरे नाटक में उपस्थिति नाटककार की विशिष्ट तकनीक है।

14· नाटककार ने मानव में निहित पशुता को तिलचट्टा, तेन्दुआ आदि के रूप में चित्रित किया है।

15· क्लर्क नं·3 और देव की मरने या बेहोश होने के बाद पृष्ठभूमि से उठने वाली आवाज़ भी शिल्प की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है।

16· पात्र वर्ग-विशेष के प्रतिनिधि होने के कारण इन पात्रों के नामकरण- अफसर, क्लर्क 1,2,3, डिस्पैचर, चपरासी, युवक, पत्रकार, हवलदार, सिपाही, पिंडारी, बूढ़ा या लड़का 1,2,3,4,5 और 6 आदि-प्रतीकात्मक हैं।

चरित्र-चित्रण की विधियाँ

मुद्राराक्षस ने पात्रों के चरित्र उभारने पर उतना ध्यान नहीं दिया, जितना उनके जीवन की त्रासद स्थिति उभारने पर दिया है। फिर भी उनके नाटकों में चरित्र की कुछ रेखाएँ अवश्य उभारती हैं। उनके नाटकों में चरित्र-चित्रण की निम्नलिखित विधियाँ प्रयुक्त हुई हैं-

मुद्राराक्षस के असंगत नाटक : चरित्र-चित्रण की विधियाँ

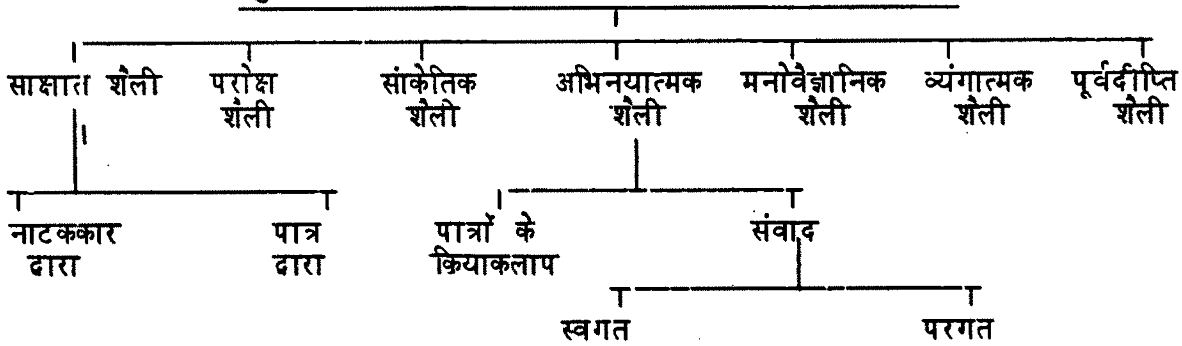

1· **साक्षात शैली -**

इसके दो भेद हैं- (अ) नाटककार द्वारा, (ब) पात्र द्वारा

अ· **नाटककार द्वारा -**

नाटक में इस शैली का प्रयोग विशेष नहीं होता, क्योंकि नाटककार को एक मर्यादा के भीतर चलना होता है। वह स्वयं अपने पात्रों का चरित्र-चित्रण नहीं कर सकता। फिर भी नाटककार अपने पात्रों के नाम, काम-धाम, उनके सामान्य औपचारिक परिचय, रूपाकार-वेशभूषा-रुचि-अभिरुचि तथा स्थिति आदि के बारे में नाट्य-संकेतों के माध्यम से जो कुछ कहता है उसके द्वारा पात्रों के चरित्र की कुछ रेखाएँ उभरती हैं। मुद्राराक्षस ने अपने नाटकों में नाट्य-निर्देश बहुत कम दिये हैं, तथापि जो कुछ नाट्य-निर्देश मिलते हैं उसके पात्रों के चरित्र पर कुछ प्रकाश अवश्य पड़ता है। उदाहरण के लिए **"योर्स फेथफुली"** नाटक के आरंभ में दिये गये नाट्य-निर्देश[6] कर्मचारियों के वर्ग चरित्र को उभारने में सक्षम हैं।

ब· **पात्र द्वारा -**

कभी कभी पात्र दूसरे पात्रों की उपस्थिति में अपने संबंध में स्वयं बताते हैं जिससे उनके चरित्र पर कुछ प्रकाश पड़ता है। **"योर्स फेथफुली"** का अफसर अपनी तरक्की के बारे में कंचन रूपा से कहता है- "बाइस बरस हुए मुझे नौकरी करते। दस बरस पहले मेरी तरक्की हुई थी। अब मैं अपने से छोटे से बात नहीं कर सकता न। और इस दफ्तर में मेरे बराबर का दूसरा नहीं है।[7]

2· **परोक्ष शैली -**

परोक्ष पद्धति में नाटककार स्वयं अपने पात्रों के संबंध में कुछ नहीं कहता। इसमें दो पात्रों के संवादों के माध्यम से किसी तीसरे पात्र के चरित्र पर प्रकाश डाला जाता है। मुद्राराक्षस के नाटकों में इसके अनेक उदाहरण मिलते हैं। जैसे,

भूमि : अब कुछ ज्यादा ही परेशान करने लगे हैं।

आदर्श : कौन ? पापा ? हाँ।

भूमि : एक बार किसी को फिर दिखा देते।

आदर्श : हूँ।

भूमि : अकेले कभी कभी डर लगने लगता है।

आदर्श : वैसे करेंगे तो कुछ नहीं। और दिखाया भी किसे जाय। मेंटल हास्पिटल वाले कहते हैं कि...[8]

यहाँ आदर्श और भूमि के संवादों के माध्यम से बूढे बाप के चरित्र पर प्रकाश पड़ता है।

3. <u>सांकेतिक शैली</u> -

यहाँ नाटककार दृश्य, घटना या परिस्थिति का विशद चित्र अंकित नहीं करता। बल्कि कतिपय संकेतों के माध्यम से ही अपने पात्रों का चरित्र-चित्रण प्रस्तुत करता है। मुद्राराक्षस ने इस शैली से भी काम लिया है। उनके नाटकों के कुछ पात्र प्रत्यक्ष रंगमंच पर नहीं आते, फिर भी रंगमंच पर उपस्थित पात्र उनके संबंध में कुछ संकेत देते हैं, जिनसे उन पात्रों के चरित्र पर प्रकाश पड़ता है। उदा. "तिलचट्टा" के डॉक्टर, मफतलाल, बकरे की बोली बोलने वाला आदमी तथा "तेन्दुआ" के मिस्टर मदान, कैप्टन श्याम, डॉ. फिशर आदि कुछ पात्र रंगमंच पर कभी नहीं आते, फिर भी पात्रों के उनके संबंध में संकेत उनके चरित्र पर प्रकाश डालने के लिए पर्याप्त हैं।

4. <u>अभिनयात्मक शैली</u> -

शिल्प की दृष्टि से अन्य शैलियों से यह शैली अधिक कलात्मक और श्रेष्ठ है। इस पद्धति में पाठक या दर्शक नाटककार के मुख से पात्रविशेष के गुणों को न सुन कर स्वतः पात्र के कार्यों और संवादों से उसकी विशेषताओं से परिचित होते हैं। नाटककार तथ्यों को इस रूप में रखता है कि दर्शक या पाठक के मन में पात्रों के चरित्र की रेखाएँ स्वयं उभरती हैं, अतः इसे "नाटकीय" शैली" भी कहा जा सकता है। इस पद्धति के अनुसार पात्रों का चरित्र-चित्रण दो प्रकार से होता है-

अ. <u>पात्रों के क्रिया-कलाप द्वारा</u> -

रंगमंच पर पात्र जो क्रिया-कलाप करते हैं, उनसे उनके चरित्र की कुछ विशेषताएँ उभरती हैं। मुद्राराक्षस के नाटकों के पात्र तो रंगमंच पर आद्यन्त क्रियाशील रहते हैं। पात्रों के ये क्रियाकलाप उनके चरित्र पर काफी प्रकाश डालते हैं। "मरजीवा" के बूढ़े बाप की

BARR. BALASAHEB KHARDEKAR LIBRARY
SHIVAJI UNIVERSITY KOLHAPUR

चारित्रिक विशेषताएँ उसके क्रिया-कलापों के माध्यम से ही उभरती हैं।

ब· संवाद या कथोपकथन द्वारा -

संवाद या कथोपकथन द्वारा पात्रों के चरित्र पर सहज स्वाभाविक ढंग से प्रकाश पड़ता है। इसमें दो पद्धतियों से पात्रों की चारित्रिक विशेषताएँ स्पष्ट होती है। कभी पात्र के आत्मपरक संवाद द्वारा उसका चरित्र स्पष्ट हो जाता है तो कभी दो पात्रों के परस्पर आलोचनात्मक संवाद किसी अन्य चरित्र की रेखाएँ उभरते हैं। पहले पद्धति को "स्वगत" और दूसरी को "परगत" भी कहा जाता है। मुद्राराक्षस के "तेन्दुआ" नाटक में रेनु राय के प्रथम अंक के संवाद ज़्यादातर आत्मपरक शैली में हैं, जो उसके चरित्र को भली-भाँति उभारते हैं। मुद्राराक्षस के "मरजीवा" नाटक में आदर्श और भूमि के संवाद शिवराज गंधे के चरित्र-चित्रण में सहायक हैं। यथा-

भूमि : क्या वो हर औरत इसीलिए बुलाता होगा ?

आदर्श : हाँ, हर औरत। औरत सूँघने के लिए नहीं बुलाता।

भूमि : : मैं जाऊँगी ही नहीं।

आदर्श : अरे अजब जहालत है। न जाने पर जबर्दस्ती बुलाएगा।[9]

5· मनोवैज्ञानिक शैली-

वास्तव में चरित्र-चित्रण की यह विश्लेषणात्मक पद्धति ही है, पर जब यह शैली मनोविज्ञान से अनुप्राणित होती है तब उसे मनोवैज्ञानिक शैली कहा जाता है। इसमें घटना, परिस्थितियों तथा पात्रों के कार्यों पर मनोवैज्ञानिक ढंग से प्रकाश डाला जाता है। मुद्राराक्षस मनोवैज्ञानिक नाटककार नहीं हैं, तथापि उनके नाटकों में खंडित व्यक्तित्व का अंकन इस शैली में ही हुआ है। "तिलचट्टा" में देव और केशी के अवचेतन मन पर स्वप्नदृश्यों के माध्यम से काफी प्रकाश पड़ता है। "मरजीवा" में देव के मन का अन्तर्द्वंद भी इसी शैली में स्पष्ट होता है।

6· व्यंग्यात्मक शैली-

नाटककार विशिष्ट शब्दावली के माध्यम से जब परिस्थिति, वर्ग, भावना या विशिष्ट चरित्र के प्रति व्यंग्य करता है तो उसे व्यंग्यात्मक शैली कहा जाता है। इसमें शब्दों का अर्थ प्रायः व्यंग्यात्मक होता है। मुद्राराक्षस ने अपने असंगत नाटकों में जीवन की विभिन्न असंगतियों का पर्दाफाश अक्सर इसी शैली में किया है। प्रस्तुत प्रबंध के तीसरे अध्याय में इसे विश्लेषण और उदाहरणों के साथ स्पष्ट किया गया है।

7· **पूर्वदीप्ति शैली** -

इसमें स्मृति के माध्यम से पात्र के जीवन की घटनाओं का चित्रण किया जाता है। मुद्राराक्षस के नाटकों में यत्र-तत्र इस शैली के उदाहरण भी मिल जाते हैं। उदाहरणार्थ उनके "**योर्स फेथफुली**" नाटक में डिस्पेचर का वेश्या के पास जाने का किस्सा[10] इसी शैली में वर्णित है। "तेन्दुआ" में भी रेनु राय के कॉलेज जीवन की कुछ घटनाओं[11] पर इसी शैली द्वारा प्रकाश डाला गया है।

आलोच्य नाटकों में विसंगत जीवन-बोध की दृष्टि से पात्रों की सृष्टि और प्रणाली विशेष महत्त्वपूर्ण है।

3· **संवाद शिल्प**

मुद्राराक्षस हिन्दी के एक ऐसे शब्दशिल्पी और यथार्थवादी नाटककार है, जो अपने नाटकों में आज के जीवन को मार्मिक और व्यंग्यात्मक शब्दों में अभिव्यक्त करते हैं। नाट्य-शिल्प की दृष्टि से उनके अधिकांश नाटक असंगत नाटकों की श्रेणी में आते हैं और असंगत नाटकों के संवाद मुख्यतया वर्तमान मानव जीवन की असंगतियों को प्रस्फुटित करने की क्षमता से युक्त होते हैं। आज का मानव जीवन इतना जटिल और विसंगत बन गया है कि उसकी यथार्थ अभिव्यक्ति के लिए असंगत नाटककारों को अपनी पुरातन संवाद योजना को छोड़कर जीवन की निकटतम लेकिन विसंगतियों को उजागर करने की क्षमता से युक्त संवाद योजना को अपनाना पडा है।

मुद्राराक्षस स्वयं एक ख्याति-प्राप्त नाटककार, कुशल अभिनेता और निर्देशक होने के कारण उनके नाटकों के संवाद रंगमंचीय और नाटकीयता से युक्त हैं। जीवन के नग्न यथार्थ को अभिव्यंजित करने की पूरी ताकद उनमें विद्यमान है। उनके नाटकों के संवादों में दिखाई देने वाली विविधता और विसंगति मानव की टूटी हुई जीवन गाथा को सशक्तता से अभिव्यक्त करती है। असंगति के माध्यम से मानव जीवन के कटु यथार्थ की वास्तविक अभिव्यक्ति ही उनके नाटकों का प्रमुख उद्देश्य है। अतः उन्होंने अपने नाटकों में संवादों के जो विविध प्रयोग किये हैं, वे उनकी जीवन के प्रति देखने की सूक्ष्म दृष्टि और आज के जीवन में कूट कूट कर भरी हुई विसंगति के ही द्योतक हैं। मुद्राराक्षस के असंगत नाटकों में संवाद शिल्प की निम्नलिखित प्रमुख विशेषताएँ दृष्टिगोचर होती हैं-

1· **संबोधनहीन संवाद** -

संबोधनहीनता मुद्राराक्षस के असंगत नाटकों की एक प्रमुख विशेषता है, जिसे उन्होंने नाटकीय अनिवार्यता के रूप में स्वीकार किया है।[12] उनके नाटकों के पात्र एक-

दूसरे को संबोधित नहीं करते, दूसरे पात्र क्या कह रहे हैं इस ओर भी उनका ध्यान नहीं रहता। इसीलिए उत्तर-प्रत्युत्तर का क्रिया-प्रतिक्रिया जैसी कोई चीज इन संवादों में नहीं है। "मरजीवा" के बूढे बाप के विक्षिप्त संवाद संबोधित होकर भी किसी को संबोधित नहीं है। "योर्स फेथफुली"में दफ्तरी मशीन की तरह बोलने वाले कर्मचारियों के संवादों में भी संबोधनहीनता दिखाई देती है। जब आफिस स्टेनो मिस कंचन रूपा अपनी मौत का बयान करना चाहती है तो अफसर उसकी बात अनसुनी कर अपनी ही कहता जाता है। इसी प्रकार तीसरा क्लर्क जब अपने और कंचन रूपा के बीच के संबंध प्रकट करना चाहता है तो दफ्तरके अन्य कर्मचारी उदासीनता और विरक्ति दिखाते हैं। "तिलचट्टा" में भी देव और केशी के संवाद किसी अन्तःसूत्र के अभाव में अपने में ही घुटते पात्रों की मनःस्थिति के सूचक हैं।

"तेन्दुआ" के संवादों के बारे में तो स्वयं नाटककार का कथन है- "नाटक की एक अनिवार्य शर्त संवाद-संबोधन इसमें नहीं है।"[13] नाटक के पहले अंक में भूषणराय और लड़कों के संवादों में संबोधनहीनता का अच्छा प्रयोग हुआ है-

भूषणराय : किधर गया वो ? तुम लोगों ने देखा उसे ? किधर गया ?

लड़का 2 : तुम लोग सोच-समझकर जबाब देना। गर्दन पर हाथ देकर धक्का देगा।

लड़का 5 : गर्दन पर हाथ क्या। टाँग में गोली मार दे तो रीं-रीं करते रहोगे।[14]

रेनु राय और लड़कों के संवाद भी इसी प्रकार के हैं। माली और रेनु राय तथा माली और मिसेज मदान के बीच तो संबोधन है ही नहीं, केवल रेनु राय और मिसेज मदान के संवाद है और माली का तो संवाद भी नहीं है।

2· <u>टूटे-फूटे अधूरे संवाद</u> -

पात्रों की असम्बद्ध मनःस्थिति सूचित करने के लिए मुद्राराक्षस ने कई जगह टूटे-फूटे, अधूरे, खंडित तथा विश्रृंखल संवादों का प्रयोग किया है। डॉ·गोविंद चातक के अनुसार टूटे-फूटे, अधूरे, लुप्तांशिक संवाद अर्थ की दृष्टि से पूरे वाक्य का ही प्रतिनिधित्व नहीं करते, वरन् पात्र की मानसिकता को उससे भी कहीं अधिक व्यक्त कर पाते हैं।[15] "मरजीवा"नाटक में बूढे के सारे संवाद इसी प्रकार के हैं। आदर्श और भूमि के संवादों में भी यह प्रवृत्ति दृष्टिगोचर होती है-

भूमि : मैं कह रही हूँ कि यह झूठ नहीं है। एक दिन यहीं···बैठे-बैठे उसने मुझसे तमाम बातें की थीं···मेरा यह हाथ उसने अपने हथेलियां में ले लिया था (अपना बांया हाथ दूसरे हाथ में लेती है फिर अचानक

बायां हाथ छोड़ कर दायाँ हाथ दूसरी हथेली में लेती है) नहीं ये हाथ था.... (अचानक हथेली टटोलने से ही जैसे उसे जहर की बात याद आ जाती है) लेकिन फिर..फिर..इसका असर क्यों नहीं होता ? क्यों नहीं होता असर ? क्यों नहीं होता ?[16]

"**योर्स फेथफुली**" में कंचन रूपा की शोकसभा के समय अफसर और कर्मचारियों के संवाद तथा आत्महत्या के पूर्व तीसरे क्लर्क के संवाद ऐसे ही हैं। "**तिलचट्टा**" में नींद की गोलियाँ लेने के बाद देव का असम्बद्ध वार्तालाप भी उसकी टूटी हुई मनःस्थिति का सूचक है। "**तेन्दुआ**" नाटक में भी तीसरे लड़के की बात साफ न कह पाने की छटपटाहट में संवादों की यह प्रवृत्ति देखी जा सकती है।[17]

3. **संक्षिप्त और नपे-तुले संवाद** -

"संक्षिप्त संवाद वस्तुतः अपने पैनपन, विदग्धता और अर्थतत्त्व की दृष्टि से अद्वितीय होते हैं। नाटक में त्वरा, लय और संवादों के संरचनात्मक ढाँचे के निर्माण में भी उनका बहुत हाथ होता है।"[18] मुद्राराक्षस काफी अरसे तक रंगमंच से जुडे होने के कारण संवादों के रंगमंचीय व्याकरण से भली भाँति परिचित हैं। यही कारण है कि छोटे-छोटे संक्षिप्त संवादों द्वारा वे नाटकीयता निर्माण करते हैं। उनके सभी नाटकों में यह प्रवृत्ति प्रचुरता से पायी जाती है। "**योर्स फेथफुली**" का एक उदाहरण दृष्टव्य है-

दूसरा क्लर्क : : प्वाइंट आफ आर्डर सर।

अफसर : वी काण्ट एडमिट।

दूसरा क्लर्क : मुझे हिन्दी में कहने दीजिए...एक व्यवस्था का प्रश्न है श्रीमान।

अफसर : इजाज़त है।

दूसरा क्लर्क : कुमारी कंचन रूपा हमारी इस शोक सभा में शामिल नहीं हो सकतीं।

कु.कंचन रूपा : लेकिन मैं भी तो इसी दफ्तर में हूँ।

दूसरा क्लर्क : लेकिन ये मर चुकी हैं।[19]

4. **यांत्रिक संवाद** -

आज के यांत्रिक युग में यंत्रों के सम्पर्क में रहने वाला मनुष्य स्वयं भी एक यंत्र जैसा बन गया है। उसकी भावनाएँ मर चुकी हैं। यंत्रों की तरह उसका जीवन भी नीरस एवं शुष्क बन गया है। यही कारण है कि अमानवीय यांत्रिकता आज के मनुष्य की नियति बन चुकी है। मुद्राराक्षस के असंगत नाटकों में संबंधहीनता, भावनाहीनता, निस्संगता और

अभ्यास-ग्रस्तता को व्यक्त करने में यांत्रिक संवाद महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं। "मरजीवा" में आत्महत्या की तैयारी के वातावरण में आदर्श और भूमि के संवाद मानवीय भावना की उष्मा से रहित हैं। "तिलचट्टा" में देव और केशी के संबंधों में इतना ठंडापन आ गया है कि वे जमकर हिमखंड हो गये हैं। यांत्रिक संवादों की दृष्टि से मुद्राराक्षस का "योर्स फेथफुली" नाटक विशेष उल्लेख्य है। नाटक के सारे पात्र एक-दूसरे से कटे हुए और आत्मकेंद्रित हैं। वे अपने खालीपन को निस्संग बातों से भरने की कोशिश करते हैं, जिसके फलस्वरूप संवाद एक रस्म की तरह बोले जाते हैं। सरकारी पारिभाषिक शब्दावली का कोरस की तरह प्रयोग करना, सभी कर्मचारियों द्वारा एक ही स्वर में दफ्तरी सेवा संहिता का दुहराया जाना, और बीच-बीच में समाचार या भविष्य पढ़ने लग जाना सरकारी कर्मचारियों की भावनाहीनता और निस्संगता का द्योतक है। डॉ॰गोविंद चातक के अनुसार संवादों का यह यांत्रिक ढाँचा मानवीय संवेदना का ठंडापन ही नहीं, उसकी विवशता और जड़ता की त्रासदी को भी व्यक्त करता है।[20]

5· अप्रत्याशित संवाद -

मुद्राराक्षस की यह विशेषता है कि कभी-कभी वे पात्र, स्थिति, संवाद आदि में अत्याशित को स्थान देकर विलक्षण विसंगत प्रभाव उत्पन्न करते हैं। अन्तर्विरोध, उभयमुखता और संदिग्धता प्रकट करने वाले संवाद भी अप्रत्याशित होते हैं, जिन पर हम तीसरे अध्याय में "द्विपक्षीस संदिग्धियाँ" शीर्षक के अंतर्गत विवेचन कर चुके हैं। इसके अतिरिक्त पात्र जब यह निर्णय नहीं कर पाते कि संबोधक उनसे क्या प्रतिक्रिया चाहते हैं, संवाद अर्थ-संतुलित बन जाते हैं, जो अप्रत्याशितता का एक आधार है। "वस्तुतः अप्रत्याशित संवाद ही नाटक के वास्तविक अर्थ के वाहक बनते हैं। ऊपर से बेतुके, प्रलापयुक्त और अर्थहीन लगने पर भी वे एक आरोपित विश्वसनीयता के परिवेश में अपने औचित्य को सिद्ध करते हैं।"[21]

"मरजीवा" और "तिलचट्टा" में पति-पत्नी के निरंतर विघटित होते संबंध अप्रत्याशितता को जन्म देते हैं। "योर्स फेथफुली" में पात्र मानवीय जीवन-संदर्भों पर दफ्तरी भाषा और व्यवहार का बेतुका आवरण चढ़ा लेते हैं, जिसके परिणामस्वरूप अफसर और कर्मचारियों के संवाद भी अप्रत्याशित हैं। "तेन्दुआ" के संबंध में तो स्वयं नाटककार ने स्वीकार किया है कि " वे न बोले जाने वाले शब्द ही पहले और तीसरे अंक के लड़के बोलते हैं।"[22]

6· संवादों में संवाद -

मुद्राराक्षस के असंगत नाटकों में यह प्रवृत्ति भी यत्र-तत्र पायी जाती है। "योर्स-

फेथफुली" नाटक में डिस्पेचर किसी एक आदमी के साथ वेश्यालय में जाने का अपना अनुभव अन्य कर्मचारियों को सुनाता है। इस प्रसंग में डिस्पेचर के संवाद दृष्टव्य है- "एक दिन उसने मुझसे कई घंटे बातें की। औरतों की। उसने कहा, अगर मैं चाहूँ तो वह मुझे भी किसी औरत के पास ले चलेगा।....तॉगे पर दोनों गए।...जब वह मकान आ गया तो तॉगा रुकवा कर वह लंबा आदमी उतर गया। उसने कहा कि तुम इंतजार करो, पहले मैं निबट आऊँ। वह औरत ज्यादा देर रुकने नहीं देती है। बाद में तुम चले जाना। थोडी देर बाद वह लंबा आदमी वापस आ गया। ऑंख के इशारे से उसने बताया कि वह "कर" आया है। फिर धीरे से बोला..."दस रुपये तुम्हारे भी दे आया हूँ। औरत अच्छी है.." कह कर वह थका हुआ तॉगे में आ बैठा।"[23]

"तेन्दुआ" नाटक में लोकगीत के रिहर्सल प्रसंग में माली की स्त्री के संवादों में भी यह प्रवृत्ति परिलक्षित होती है।[24]

7. संवादों की पुनरावृत्ति -

मुद्राराक्षस ने अपने असंगत नाटकों में पात्रों की रिक्तता और खोखलापन, जीवन की यांत्रिकता और एकरसता, संबंधों की विशिष्टता, ऊब और स्थिति की सूचना देने के लिए पुनरावृत्ति का प्रयोग किया है। "योर्स फेथफुली" में पूरा संवादीय ढाँचा पुनरावृत्ति पर खड़ा किया गया है। पूरे नाटक में कोड आफ काण्डक्ट और फंडामेंटल रूल्स की ध्वनि गूँजती रहती है। इसी प्रकार आफिस आर्डर नं. सच एण्ड सच, डेटेड सच एण्ड सच, इल्लीगल तथा आफिस आर्डर का सभी कर्मचारियों द्वारा दुहराया जाना और हड़तालियों के नारे आदि सभी जगह पुनरावृत्ति पायी जाती है।

"तेन्दुआ" नाटक में "छापक पेड छिउलिया ..." लोकगीत की कई बार आवृत्तियाँ है। इसी प्रकार नाटक के पहले और तीसरे अंक में लड़को का घास पर पैर न रखने के संबंध में अन्यों को आगाह करना और नाटक के दूसरे अंक में रेनु राय और मिसेज मदान द्वारा माली को टार्चर करने के लिए बार-बार संगीत का प्रयोग करना भी पुनरावृत्ति के उदाहरण है।

मुद्राराक्षस के नाटकों में दिखायी देने वाली यह पुनरावृत्ति केवल शब्दों और वाक्यों की नहीं है, प्रतीकों और बिंबों की भी है। कई प्रतीक एवं विम्ब उनके नाटकों में दुहराये गये है, जैसे, तिलचट्टा, कुत्ता, कुत्तों का भौंकना, पुलिस के सायरन की आवाज, घडी (जिसका शीशा दायें किनारे पर चटख गया था और डायल पर नौ के अंक का रेडियम भी झड़ चुका था), बकरे की बोली बोलने वाला आदमी, तेन्दुआ, घास आदि।

8· संवादों द्वारा वातावरण निर्मिति -

छोटे-छोटे संक्षिप्त संवादों द्वारा आवश्यक नाटकीय वातावरण पैदा करने में मुद्राराक्षस सिद्धहस्त है। संवादों द्वारा निर्मित खौफ, आतंक, डर, खूंखारपन तथा दहशत का वातावरण उनके सभी नाटकों में पाया जाता है। "मरजीवा" में हवलदार और युवक की बातचीत के दौरान बीच-बीच में नेपथ्य से सुनाई पड़नेवाली किसी के बुरी तरह मारे जाने की और कराहने की आवाज़ें जिस प्रकार पुलिस स्टेशन के वातावरण निर्माण में सहायक हैं, उसी प्रकार उन दोनों के संवाद भी। इसी प्रकार "योर्स फेथफुली" में सरकारी पारिभाषिक शब्दों से युक्त संवाद दफ्तरी वातावरण प्रस्तुत करते है, यथा-

डिस्पैचर : आफिस आर्डर नम्बर सच एण्ड सच, डेटेड सच एण्ड सच···

कोरस : आफिस आर्डर नम्बर सच एण्ड सच। डेटेड सच एण्ड सच। सब्जेक्ट मीटिंग टु कण्डोल दि डेथ आफ आफिस स्टेनो मिस कंचन रूपा···

डिस्पैचर : कार्यालय के सभी कर्मचारियों को सूचित किया जाता है कि वे ठीक साढ़े दस बजे कार्यालय के बरामदे में एकत्र हों ताकि कुमारी कंचन रूपा की असामयिक मृत्यु पर सब लोग उनकी आत्मा के लिए शांति की कामना कर सकें।[25]

"तिलचट्टा" में स्वप्नदृश्य वाला जंगल का डरावना दृश्य संवादों द्वारा ही प्रस्तुत किया गया है। इसी प्रकार "तेन्दुआ" नाटक में भी लड़कों के भय को संवादों द्वारा चित्रित किया गया है। इसके अतिरिक्त प्रधानमंत्री के भाषण की तैयारी, भीड़ और प्रत्यक्ष भाषण संवादों द्वारा ही स्पष्ट होते हैं।

9· अतिनाटकीय संवाद -

अति-नाटकीयता मुद्राराक्षस के संवादों की अपनी विशेषता है। विसंगति को यथार्थ के स्तर पर चित्रित करने के लिए मुद्राराक्षस ने संवादों की अति-नाटकीय पद्धति का प्रयोग किया है। अति-नाटकीयता चमत्कृति, विस्मय, विखंडन, विद्रूपता, बेतुकापन आदि को आधार बनाते हुए यथार्थ को बढ़ा-चढ़ाकर प्रस्तुत करती है। कभी-कभी यथार्थ का भ्रम तोड़ने के लिए भी मुद्राराक्षस ने संवादों की इस पद्धति का प्रयोग किया है। एक ही विषम बिंदु को संवादों के द्वारा "फोकस" में लाकर विसंगति का संकेत करने में मुद्राराक्षस सिद्धहस्त हैं। नंगेपन के साथ इस प्रकार की अति-नाटकीय पद्धति का प्रयोग विसंगत नाटकों में ही संभव है।[26]

"मरजीवा" के प्रथम अंक में पुलिस अफसर जब मिनिस्टर साहब का संदेश सुनाकर चला जाता है तो भूमि रो पडती है और आदर्श उसका चेहरा अपनी ओर घुमाकर पुलिस अफसर द्वारा कहे गये संवाद दुहराता जाता है- "बृहस्पतिवार, सात बजे शाम बंगले पर। मिनिस्टर के साथ ड्यूटी बहुत मुश्किल होती है। थर्डसे शाम सात बजे बंगले पर। हाँ मिनिस्टर साहब से मिलने के बाद इस गरीब को मत भूल जाइएगा.."[27]

"योर्स फेथफुली" में बार-बार अफसर आर्डर को दुहराकर कर्मचारियों को आगाह किये जाने और डिस्पेचर के बार-बार "इल्लीगल" कहने में संवादों की अति-नाटकीय पद्धति का प्रयोग हुआ है। यहाँ नाटककार पर आयनेस्को के नाटक "लेसन" का प्रभाव स्पष्टतः देखा जा सकता हैं, जिस पर नाटककार ने "योर्स फेथफुली" की भूमिका में प्रकाश डाला है।[28] वहाँ प्रोफेसर की छात्रा द्वारा दस-पंद्रह पृष्ठों तक लगातार दुहराया जाता एक वाक्यांश "मेरे दाँतों में दर्द "अर्थवत्ता" और लय -निर्भरता से मुक्त है। पचासों बार एक ही तरह से बोला जाकर भी यह वाक्य दर्शकों को उबाने के बदले उनकी नाटकीय संलग्नता को आगे ले जाता है। इसी प्रकार समूचे पंद्रह-सोलह पृष्ठों में प्रोफेसर अकेले लगातार बोलता जाता है। फिर भी इस नाटक में इतना गहरा नाटकीय तनाव पैदा हो जाता है कि दर्शक की साँस रूक जाती है।

10. <u>संवादों का परपीड़न रतिमूलक प्रयोग</u> -

डॉ.गोविंद चाक के अनुसार मुद्राराक्षस के शब्द-प्रयोग की एक और विशेषता यह भी है कि वे पात्रों की ऊब तोड़ने के लिए उनसे शब्दों का परपीड़न रतिमूलक प्रयोग कर दिखाते हैं। उनके पात्र इस भावना से ग्रस्त होते हैं और इसी प्रवृत्ति के कारण वे शब्दों से दूसरों को कोंचने लगते हैं।[29] "मरजीवा", "तिलचट्टा" और "तेन्दुआ" में पति-पत्नी जान-बूझकर अपने कल्पित प्रेम संबंधों की कहानी एक-दूसरे के सामने पेश करते हैं। "मरजीवा" में आदर्श और भूमि के फिलासफर संबंधी संवाद,[30] "तिलचट्टा" में देव और केशी के डॉक्टर से संबंधित संवाद[31] और "तेन्दुआ" में भूषणराय और रेनु राय के माली के संबंध में संवाद[32] इसी प्रकार के हैं।

11. <u>संवादों में मौन का प्रयोग</u> -

यद्यपि मौन संवादीय स्थिति के बीच व्यवधान का सूचक है, फिर भी उसे एकदम असंवाद की स्थिति भी नहीं कहा जा सकता। क्योंकि मौन से पहले और बाद में कह गये संवादों में अर्थ की एक अनुगूंज व्याप्त रहती है। वस्तुतः मौन भी एक प्रकार से अनकही भाषा ही है, जो प्रायः कहे गये शब्दों से भी अधिक कह जाती हैं।"[33] मुद्राराक्षस

ने अपने नाटकों में स्वीकृति, अस्वीकृति, इच्छा, अनिच्छा, विरोध, संकोच, द्वंद, निरूत्तरता, अन्तर्मुखता, गोपनीयता, दयनीयता, बेबसी, अनिश्चय और उपेक्षा आदि की अभिव्यक्ति के लिए मौन का कलात्मक प्रयोग किया है। "तेन्दुआ" में तो मौन का एक अलग ही ढंग से प्रयोग हुआ है। सम्पूर्ण नाटक में माली का एक भी संवाद नहीं है। कभी वह डर के कारण काँपता है, कभी चीखता है, कभी कराहता है तो कभी केवल आहत नजरों से देखता है। उसके इस मौन में उसकी दयनीयता और बेबसी ही दिखाई देती है। इसी प्रकार माली की मृत्यु पर उसकी स्त्री का मौन विलाप भी उसकी बेबसी और कुछ न कर पाने की छटपटाहट को अभिव्यक्त करता है। "मरजीवा" में आदर्श और भूमि के संवादों में मौन का प्रयोग दृष्टव्य है-

आदर्श : अब उपाय क्या है। बताऊँ उपाय ? जहर ले आता हूँ। तुम भी खा लो, मैं भी खा लेता हूँ।

भूमि : ले आओ। (दोनों खामोश)

आदर्श : तुम··तुम्हें यह बहुत अच्छा लगेगा ? (खामोशी) वैसे यह मत सोचो कि मैं अपने लिए कह रहा हूँ। और इस मुगालते में भी मत रहना कि किसी के साथ सोकर वह नौकरी दे ही देगा। (खामोशी) अपने आप अगर तुम्हें इसमें एतराज नहीं है तो मैं इसमें बाधा नहीं डालूँगा।[34]

"योर्स फेथफुली" में अफसर और स्टेनो के संवादों में[35]भी मौन का प्रयोग हुआ है। इसी प्रकार "तिलचट्टा" नाटक में भी देव और केशी संवादों के बीच कई बार चुप्पी साध लेते हैं।

12· स्वगत और एकालाप -

मुद्राराक्षस में यह प्रवृत्ति विशेष रूप से दृष्टिगत नहीं होती, फिर भी यत्र-तत्र आवश्यकतानुसार इसका प्रयोग भी उनके नाटकों में देखा जा सकता है। "तेन्दुआ" नाटक में यह प्रवृत्ति विशेष रूप से दृष्टव्य है। प्रस्तुत नाटक के संवादों के बारे में स्वयं नाटककार का कथन है- "तेन्दुआ" का गठन मूलतः ऐसे सम्बोधन धर्मी संवादों से रहित है। अधिकांश हिस्सा एकालयों, स्वगतों और सम्मतियों का एक कोलाज है। विशेष रूप से पहला और तीसरा अंक।[36] यहाँ रेनुराय और लड़कों के सारे संवाद इसी प्रकार के हैं। "मरजीवा" में विक्षिप्त बूढे के संवाद भी कुछ हद तक इसी प्रकार के है। "योर्स फेथफुली" में नाटक के अंत में तीसरे क्लर्क की आत्महत्या के बाद पृष्ठभूमि से उठने वाली उसकी आवाज एकालाप[37]का सुन्दर उदाहरण है।

13· संवादों में कोरस का प्रयोग -

डॉ·गोविंद चातक के अनुसार "सूच्य के लिए कोरस का कलात्मक प्रयोग आज के नाटक के लिए एक उपलब्धि माना जाना चाहिए। परम्परा की भाँति आज उसका प्रयोग बाह्य स्थूल घटनाओं की सूचना देने अथवा कथावस्तु का सूत्र आगे बढ़ाने के लिए ही नहीं, वरन आंतरिक द्वंद, स्थिति की व्याख्या, टिप्पणी, घटनाक्रम के पुर्वानुमान तथा नाटककार की दृष्टि प्रस्तुत करने के लिए सफलतापूर्वक किया जा रहा है।"[38]

मुद्राराक्षस ने "योर्स फेथफुली" नाटक के गद्य में भी सफलतापूर्वक कोरस का प्रयोग किया है।[39] कोरस का यह सर्जनात्मक प्रयोग मुद्राराक्षस की बहुत बडी उपलब्धि है।

14· आशिल्पन और लय का विरोध -

मुद्राराक्षस आशिल्पन अर्थात रीतिबद्धता और लय दोनों के विरोधी हैं। आशिल्पन को वे अभिजात वर्ग के नाटककारों की साहित्यिक चालाकी की संज्ञा देते हैं तो लय की तलाश को सिर्फ चमत्कार की। "तेन्दुआ" के स्वगत में उन्होंने आशिल्पन का विरोध किया है।[40] उनके मतानुसार सामाजिक-ऐतिहासिक यथार्थ न सुघड़ है, न व्यवस्थित और न ही उसमें किसी प्रकार का सिलसिला होता है। ऐसी सामाजिक समग्रता वाले नाट्य क्षणों के लिए आशिल्पन (स्टाइलाइज़ेशन) बहुत भोथरी रंग क्रिया है।

आशिल्पन का विरोध करने के बावजूद मुद्राराक्षस के नाटकों में कुछ मात्रा में यह प्रवृत्ति दिखाई देती है। लेकिन उनके नाटकों में यह आशिल्पन प्रयत्न साध्य नहीं है और न ही अपने आप में सब कुछ है। "तेन्दुआ" के दूसरे अंक में नृत्य मुद्राओं वाला हिस्सा ठेठ आशिल्पन पर निर्भर है और नाटक के पहले और तीसरे अंक के संवादों का भी एक अपना चारित्रिक आशिल्पन है। स्वयं नाटककार ने भी नाटक के स्वगत में इस बात की स्वीकृति दी है।[41] उनके "मरजीवा" नाटक में भी मुर्दुमशुमारी के लिए आये युवक और आदर्श के संवादों में यह प्रवृत्ति दिखाई देती है।[42]

मुद्राराक्षस ने "योर्स फेथफुली" की भूमिका में लय का अस्वीकार करते हुए कहा है कि नाटकीय भाषा में उद्दिष्ट अर्थ न तो शब्दकोष-निर्भर होता है और न ही ध्वन्यात्मकता और लय-विशिष्टता से प्रभावित होता है। उनके अनुसार ऐसी भाषा जो अर्थवत्ता और लय निर्भरता से मुक्त हो, आधुनिक नाट्य लेखन का बहुत बडा अनुसंधान है।[43] इसी कारण मुद्राराक्षस के नाटकों में लय का सायास प्रयोग नहीं दिखायी देता। लेकिन जहाँ कहीं भी उन्होंने आशिल्पन का प्रयोग किया है, वहाँ लय की प्रवृत्ति भी दिखायी देती

है।

संवाद शिल्प के विविध प्रयोग मुद्राराक्षस के नाटकों की एक विशिष्ट उपलब्धि है।

4· भाषाशैली -

नाटक की भाषा रंगमंच और प्रेक्षक से सीधी जुड़ी होने के कारण साहित्य की अन्य विधाओं से पृथक होती है। डॉ·नेमिचंद्र जैन के अनुसार नाटक की भाषा में एक साथ ही काव्य जैसी गहन लाक्षणिकता, सूक्ष्मता और चित्रवत्ता और बोलचाल की भाषा की-सी मूर्तता, प्रवाह और सरलता आवश्यक होती है। उसमें पात्रानुकूल विविधता और लचीलापन भी होता है और समर्थ भाषा की शैलीपरकता, विशिष्टता और साहित्यिकता भी।[44] किन्तु मुद्राराक्षस मूलतः असंगत नाटककार होने के कारण उनकी नाट्यभाषा परम्परागत नाटकों की भाषा से कुछ भिन्न हैं। उन्होंने अपने नाटकों में सामान्य बोलचाल की निरावरण भाषा को अधिक महत्त्व दिया है। इसीलिए "**योर्स फेथफुली**" नाटक की भूमिका में "मुखोटे वाले शब्दों की भाषा" को अस्वीकार करते हुए वे नंगे शब्दों के नंगे चेहरे की हिमायत करते हैं।[45]

वास्तव में नाटक रंगमंचीय विधा है और नाटक के पात्र रंगमंच पर भाषा का प्रत्यक्ष प्रयोग करते हैं। फिर यह भी ध्यातव्य है कि प्रत्येक पात्र की अपनी योग्यताएँ और विशिष्टताएँ होती हैं। यही कारण है कि नाटक की भाषा मूलतः अर्थ सीमित नहीं होती। साहित्य की अन्य विधाओं की भाषा जहाँ सीधी अर्थाभिव्यक्ति करती है, वहाँ नाटक की भाषा काफी हाशिया छोड़ देती है। मुद्राराक्षस के अनुसार "जिस नाटक की भाषा में ये अर्थ विशिष्टताएँ पैदा करने की गुंजाइश सबसे ज़्यादा हो वह सबसे अच्छा नाटक हो सकता है। इसे हाशिएवाली भाषा कह सकते हैं जिसमें हर नया आदमी अपने विशिष्ट अर्थ अंकित कर सके।"[46]

मुद्राराक्षस के असंगत नाटकों में भाषाशैली की दृष्टि से निम्नलिखित प्रमुख विशेषताएँ दृष्टिगोचर होती है-

1· **हरकत की भाषा** -

असंगत नाटकों की यह विशेषता होती है कि रंगमंच पर पात्र हमेशा क्रियाशील रहते हैं। पात्रों के संवाद कम होते हैं और हरकत अधिक। इसीलिए डॉ·चंद्र ने इसे "हरकत की भाषा" संज्ञा से विभूषित किया है।[47] मुद्राराक्षस ने "**मरजीवा**", "**योर्स फेथफुली**", "**तेन्दुआ**" आदि नाटकों में इस प्रकार की भाषाशैली का प्रयोग किया है। केवल "**तिलचट्टा**" नाटक के संवादों में हरकत का अभाव दिखाई देता है। "**तेन्दुआ**" नाटक में इस प्रकार

की भाषाशैली का एक उदाहरण दृष्टव्य है-

रेनु राय : (लड़का 1 से) सुनो जरा इधर आना।

लड़का 2 : एई उधर घास का ध्यान रखना··

रेनु राय : (लड़का 1 से) नज़दीक आओ न (लड़का 1 के सामने पीठ करके खड़ी हो जाती है) जरा इसके हुक खोलना, मै तुम्हारी ड्रेस का ट्रायल कर लूँ। जरा हुक खोल दो···

(लड़का 1 उसकी पीठ के खुले हिस्से की ओर काँपता हाथ बढ़ाता है और रूक जाता है।)

लड़का 2 : साले को पता लगेगा। कुटम्मस हो जाएगी।

रेनु राय : (लड़का 1 से) अरे क्या कर रहे हो ? खोलो न।

(लड़का 1 फिर वैसी ही हरकत करता है।)

लड़का 4 : जेल में फिकवा दे तो पता भी नहीं लगेगा।

(लड़का 1 वैसे ही खडा है। काँपता है)

रेनु राय : (घुमकर) तुम लोगों की यह आदत बड़ी खराब होती है।[48]

2· <u>आम साहित्यिक अभिव्यक्ति की भाषा</u> -

मुद्राराक्षस के सभी असंगत नाटकों में आम बोलचाल की भाषा का प्रयोग हुआ है। मंचन की दृष्टि से इस भाषा का विशेष महत्त्व है। साहित्यिक व्यंजनाओं से मुक्त होने के बावजूद यह भाषा अर्थगहन भी होती है और गहरी भी। **"मरजीवा"** और **"तेन्दुआ"** नाटकों में इस प्रकार की भाषाशैली का विशेष प्रयोग हुआ है। **"मरजीवा"** की भाषा के संबंध में स्वयं नाटककार का कथन है कि **"मरजीवा"** में नाटक की विशिष्ट भाषा नहीं है बल्कि आम साहित्यिक अभिव्यक्ति की ही भाषा का इस्तेमाल हुआ है।[49]

"तेन्दुआ" में भी आम बोल-चाल की सहज मंचीय भाषा प्रयुक्त हुई है। प्रस्तुत नाटक में एक ओर भूषणराय, रेनु राय जैसे उच्च वर्ग के पात्र हैं तो दूसरी ओर निम्न वर्ग के लड़के और माली जैसे साधारण पात्र हैं। दोनों वर्गों की भाषा एक ही होते हुए भी अर्थ-संतुलन और संस्कार-शुद्धि की दृष्टि से उसमें अंतर हैं। भूषणराय और लड़कों के संवादों से यह बात स्पष्ट होती है-

भूषणराय : (लड़कों से) यू कैन पुट सम स्पीकर्स हियर। मेरा ख्याल है इतनी दूर पर स्पीकर होना ज़्यादा जरूरी है।

लड़का 2 : (बाकी लड़कों से) जानते हो न ? भोंपू। बहुत बड़ा-सा।

भूषणराय : पोल यहीं गाड़ोगे। मेरा ख्याल है यहाँ पर एक पोल में तीन स्पीकर लगाना।

लड़का 2 : (बाकी से) लम्बा लगेगा। ऊँचा -सा। तीन भोंपू तीन।

भूषणराय : हाँ इस बात का ख्याल रखना, लाऊड स्पीकर डिफेक्टिव हुए तो गोली मरवा दूँगा।

लड़का 2 : (बाकी से) बंदूक वाली गोली। तमंचे वाली नहीं। देखा था साहू जी के यहाँ डकैतों ने कितने जोर की गोली छुड़ाई थी। वो गोली तमंचे की नहीं थी। बंदूक से चलाई थी।

लड़का 5 : अच्छा अब तुम अपनी ज़बान पर लगाम क्यों नहीं देते ?

भूषणराय : (कुछ परेशानी के साथ निरीक्षण करते हुए) आई डोण्ट नो हाउ विल यू डू इट। 'समय बहुत कम है। लैट अस सी··[50]

3· **हाशिएवाली भाषा** -

मुद्राराक्षस के भाषा की यह विशेषता है कि जितना वे भाषा के माध्यम से कहते हैं, उससे कहीं अधिक की अभिव्यक्ति होती है। कम शब्दों में वे बहुत कुछ कह जाते हैं। अर्थात् उनकी भाषा में अर्थ विशिष्टताएँ पैदा करने की गुंजाइश अधिक है। मुद्राराक्षस की यह हाशियेदार भाषा है, जिसमें दर्शकों को पकड़ने की अद्भुत क्षमता है। उनके सभी नाटकों में यह प्रवृत्ति दिखाई देती है। विशेषकर "**योर्स फेथफुली**" और "**मरजीवा**" में इसका प्रयोग अपेक्षाकृत अधिक है। अफसर और स्टेनो के संवादों का एक उदाहरण दृष्टव्य है-

अफसर : तुम मर चुकी हो, मिस रूपा ? सचमुच ? सचमुच मर चुकी हो ? एक बात बताओ···क्या मरी हुई लड़की प्रतिवाद करती है ? मिस रूपा···

स्टेनो : जी··?

अफसर : क्या तुम्हारे ख्याल से मरी हुई लड़की···मेरा मतलब है अगर उसके साथ····यानी कोई आदमी अगर मरी हुई लड़की के साथ कुछ करे··[51]

4· **मानवीय संवेदनाओं की भाषा** -

मुद्राराक्षस मूलतः मानवीय संवेदनाओं के नाटककार है। यही कारण है कि उनके नाटकों में मानवीय संवेदनाओं को वाणी देने वाली भाषा का प्रयोग हुआ है। मानवीय

नियति की त्रासदी उभारना उनके नाटकों का एक प्रमुख उद्देश्य है। इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिए अपने नाटकों में वे मानवीय संवेदनाओं की भाषा प्रयुक्त करते हैं। "तिलचट्टा" में उन्होंने इसकी स्वीकृति देते हुए लिखा है- "नाटक की भाषा मानवीय संवेदनाओं की भाषा है, बौद्धिकता की नहीं।"[52] उदाहरण दृष्टव्य है-

देव : लेकिन तुम सोचकर देखो, केशी क्या यह बहुत अच्छा लगता है ? इस तरह का बच्चा लेकर क्या हम लौट सकते थे ? कैसे लौटते, तुम्हीं सोचो। और सच यह है कि वह मेरा बच्चा था ही नहीं।··लेकिन, केशी तुम्हें ऐसा बच्चा हुआ कैसे ?"[53]

"मरजीवा" में भी आत्महत्या की तैयारी से संबंधित आदर्श और भूमि के संवादों में मानवीय संवेदनाओं की भाषा का प्रयोग हुआ है। "योर्स फेथफुली" में सरकारी दफ्तरों की पारिभाषिक अर्थ रखने वाली भाषा का प्रयोग हुआ है, किंतु पात्र जिन स्थितियों में उसका उपयोग करते हैं वे उसके तटस्थ ठंडेपन को नितांत गहरी मानवीय संवेदना में रूपांतरित कर देती है।[54]

5· <u>अभिव्यक्ति का ठंडापन</u> -

मुद्राराक्षस की भाषा का मूल स्वर ठण्डेपन का है। उनके सभी असंगत नाटकों में वर्ग और व्यवस्था के प्रति आक्रोश तो हैं, पर कहीं भी उनके पात्र इनके खिलाफ विद्रोह नहीं करते। नाटकों के मुख्य पात्र अधिकतर आत्महत्या में ही राहत ढूँढते दिखाई देते हैं। जहाँ उद्वेलन और विद्रोह होना चाहिए वहाँ भी वे निष्क्रिय रहते हैं। "मरजीवा" में शिवराज गंधे गलत इरादे से भूमि को अपने बंगले पर आमंत्रित करता है, पर आदर्श इसके खिलाफ विद्रोह करने के बदले आत्महत्या का निश्चय करता है। "योर्स फेथफुली" में अफसर क्लर्क नं·3 की पत्नी कंचन रूपा के साथ दफ्तर में ही संभोग करता है। यहाँ भी प्रतिक्रिया के रूप में क्लर्क नं·3 विद्रोह करने के बदले दफ्तर में आत्महत्या करता है। "तिलचट्टा" में देव द्वारा नींद की गोलियाँ खाना इसी ओर संकेत करता है। "तेन्दुआ" में तो माली यातनाओं को सहते-सहते चुपचाप मृत्यु का वरण करता है। मिसेज मदान उसके संबंध में ठीक ही कहती है- "दीज फुल्स···ये तो, मेरा ख्याल है रिएक्ट भी नहीं करते···"[55]

इस प्रकार उनके सभी नाटकों के पात्र विषम स्थिति में भी अभिव्यक्ति का ठंडापन बरकरार रखते हैं। उनकी भाषा की इस प्रवृत्ति के कारण डॉ·गोविंद चातक कहते हैं- "मुद्राराक्षस की भाषा में भावुक विस्फोट का शाब्दिक तनाव नहीं है, बल्कि बर्फ की तरह

बहुत गहरे में जम जाने की स्थिति है।"[56]

6. <u>नंगे शब्दों का प्रयोग</u> -

हिंसा, सेक्स, यातना, उत्पीडन, नंगापन, आतंक मुद्राराक्षस के नाटकों के मुख्य विषय हैं, जो उनकी भाषा को कुछ खास तेवर प्रदान करते हैं। इसीलिए परम्परागत नाटकों की मुखौटो वाली भाषा को त्यागकर उन्होंने अपने नाटकों में शब्दों के नंगे चेहरों का इस्तेमाल किया है। मुखौटे वाली भाषा को वे नए नाटक के विकास में सबसे बड़ी बाधा मानते हैं। उन्होंने अपने नाटकों में कहीं भी युग-विशेष की भाषा के साथ निकटता स्थापित करने की कोशिश नहीं की है। इसके विपरीत वे नंगे शब्दों के प्रयोग में ही अधिक विश्वास करते हैं। इसीलिए उनके नाटकों के पात्र निरावरण कर देने वाली शब्दावली का अपनी भाषा में प्रयोग करते दिखाई देते हैं। "मरजीवा" और "तिलचट्टा" में पति-पत्नी के एक-दूसरे को कोंचने में इसी प्रकार की भाषा का प्रयोग हुआ है। "योर्स फेथफुली" में कंचन रूपा की त्रासदी और सेक्स संबंधी संदर्भ ऐसे ही शब्दों से उजागर हुए हैं। "तेन्दुआ" में तो मिसेज रेनु राय और मिसेज मदान की सारी यौन-विकृति इन्हीं शब्दों से अभिव्यक्त हुई है।

7. <u>शब्द को अर्थ से अलग करने की प्रवृत्ति</u> -

नाटकीय भाषा का अर्थगत सौंदर्य उसके शाब्दिक या कोशगत अर्थ पर निर्भर नहीं करता और न ही वह ध्वन्यात्मकता या लय-विशिष्टता से प्रभावित होता है। वास्तव में वह निर्भर करता है उसके समष्टिगत प्रभाव पर और इसीलिए मुद्राराक्षस ने अपने नाटकों में शब्द को अर्थ से अलग कर प्रभाव पैदा करने की कोशिश की है। "योर्स फेथफुली" के अंतिम पृष्ठों में डिस्पैचर द्वारा लगातार कई पृष्ठों तक दुहराया गया "इल्लीगल" शब्द अर्थवत्ता और लय-निर्भरता से मुक्त होने के बावजूद उबाने के बदले एक नाटकीय प्रभाव पैदा करता है।

"तेन्दुआ" में इसी प्रवृत्ति के कारण मुद्राराक्षस अर्थ के अज्ञान से एक प्रभाव पैदा करते दिखाई देते हैं। वहाँ "घास", "जूता", "कोट" जैसे सामान्य शब्दों को लेकर लड़के ऐसे चौंकते हैं, जैसे वे उनसे अपरिचित हों। एक उदाहरण दृष्टव्य हैं-

लड़का 2 : घास पर जूते उतारकर जाना चाहिए।

लड़का 1 : जूते उतारकर ?

लड़का 3 : जूता ? जूता क्या ?

लड़का 2 : ओह जूता ?

लड़का 4 : एक बार मेरे बाप के सिर पर थानेदार ने अट्ठारह बार जूते मारे थे।

लड़का 2 : हाँ वही जूता। वही जूता होता है। बहुत जोर से लगता है।[57]

8· **शरीर यातना की भाषा** -

मुद्राराक्षस के नाटकों में भाषा की यह प्रवृत्ति भी यत्र-तत्र दिखाई देती है। यहाँ मुद्राराक्षस पर जर्मन् नाटककार कैसर का प्रभाव परिलक्षित होता है। "तेन्दुआ" के स्वगत में स्वयं नाटककार ने इस बात को स्वीकार किया है- "पिछली सदी का एक जर्मन नाटककार है जार्ज कैसर। वह कई अर्थों में मुझे पसन्द है इसमें शक नहीं।···शरीर यातना को सामाजिक सत्य की भाषा उसने भी बनाया है और मुझे भी यह उपकरण पसन्द आया है।"[58]

"मरजीवा" के चौथे अंक में पुलिस अफसर और हवलदार द्वारा प्रयुक्त भाषा इसी प्रकार की है। "योर्स फेथफुली" में अफसर की भाषाशैली में भी कुछ हद तक यह प्रवृत्ति देखी जा सकती है। "तिलचट्टा" और "मरजीवा" में पति-पत्नी एक-दूसरे को कोंचने के लिए भाषा का परपीड़न रतिमूलक प्रयोग करते हैं। "तेन्दुआ" के दूसरे अंक में रेनु राय और मिसेज मदान की भाषाशैली में तो यह प्रवृत्ति विशेष रूप से दृष्टव्य है। रेनु राय का यह कथन इसी ओर संकेत करता है- "सुन मैंने एक बार पढ़ा था-एक्सेसिव पेन होने पर आदमी सेक्सुअली एक्साइट हो जाता है।"[59]

9· **वाक्य-विन्यास की विभिन्न प्रवृत्तियाँ** -

मुद्राराक्षस की भाषा में वाक्य विन्यास की दृष्टि से विभिन्न प्रवृत्तियाँ परिलक्षित होती है, जिनमें मुख्य ये है-

अ· **छोटे वाक्यों का प्रयोग** -

इस प्रवृत्ति के अनुसार अनुपूरक वाक्यांश को पूर्ण विराम के द्वारा काटकर उसे स्वतंत्र वाक्य का दर्जा दिया जाता है। डॉ·गोविंद चातक के अनुसार "एक वाक्य को कई वाक्यों में तोड़ना और उनके बीच पूर्ण विराम की स्थिति को दिखाना इस बात का संकेत देता है कि नाटककार अनुपूरक पदबंध को एक पूरे वाक्य का दर्जा ही नहीं देना चाहता, उनकी अदायगी में पर्याप्त उच्चारण काल और बल को भी प्रकट करना चाहता है।"[60]

मुद्राराक्षस के सभी नाटकों में यह प्रवृत्ति पायी जाती है। "मरजीवा" का एक उदाहरण दृष्टव्य है-

बूढा : हलो सर। हलो। हाउ डू यू डू मैडम। मैंने उस दिन स्नैप लिए थे, याद है। बहुत बढ़िया आए हैं। टाप क्लास। एक दम बढ़िया। देखेंगी आप···यू मिस्टर आप।[61]

ब· रिक्तिसूचक बिंदु-चिह्नों से युक्त वाक्यों का प्रयोग -

मुद्राराक्षस के वाक्य-विन्यास में जहाँ एक ओर अनुपूरक वाक्यांश को पूर्ण विराम से अलग करने की प्रवृत्ति दिखाई देती है, वहाँ दूसरी ओर दो अलग-अलग वाक्यों को केवल रिक्तिसूचक बिन्दु-चिह्नों (····)से एक सूत्र में पिरोए जाने की प्रवृत्ति भी दिखाई देती है। "**योर्स फेथफुली**" में तीसरे क्लर्क के एकालाप में वाक्य-विन्यास की यह प्रवृत्ति दृष्टव्य है- "लेकिन यह सब···आप यकीन कीजिए···बिल्कुल झूठ था··एक सपना जैसा··· वैसे सपना हम लोगों को आता ही कहाँ है सर, मैं ठीक कह रहा हूँ सर···सपना··हमें सपना देखना भी तो नहीं आता न सर···सर···आप··"[62]

क· अधूरे वाक्यों का प्रयोग -

मुद्राराक्षस के सभी नाटकों में वाक्य-विन्यास की यह प्रवृत्ति दिखाई देती है। उनके नाटकों के पात्र वार्तालाप के बीच कभी-कभी वाक्य अधूरा ही छोड़ देते हैं। लेकिन ये अधूरे वाक्य भी भाव को पूर्णता से व्यक्त करते हैं। "**योर्स फेथफुली**" से कुछ उदाहरण दृष्टव्य हैं-

"स्टेना लड़की थी···तो···", "मैं कह रहा था कि मान लो लड़की मर जाय··", "एक आदमी मरी हुई औरत की नदी में बहाई लाश निकाल लेता था और उसका कफन उतारने के बाद···" आदि।

ड· वाक्य-विन्यास में विलोपन और विखंडन -

"वाक्य-विन्यास में विलोपन और विखंडन की प्रवृत्ति भी वाक्य की संरचना और उसके आकार को प्रभावित करती है। जहाँ पात्र की मानसिक स्थिति दुराव, भावात्मक आवेग, विक्षोभ, संकोच अथवा अन्य भावात्मक दबावों से ग्रस्त होती है, वहाँ वाक्य छोटे ही नहीं होते, वरन् खंडित और असम्बद्ध भी होने को बाध्य होते हैं।[63] मुद्राराक्षस के असंगत नाटकों में यह प्रवृत्ति प्रचुरता से पायी जाती है। "**मरजीवा**" का एक उदाहरण दृष्टव्य है-

बूढा : "प्लीज··स्माइल··हाँ··रेडी···थैंक्यू। थैंक्यू··वन मोर···इधर···प्लीज··· स्कर्ट घुटनों के ऊपर··येस···योर हेट··हाँ··हैट सीने पर··येस··रेडी··· थैंक्यू··।"[64]

इ· लंबे वाक्यों का प्रयोग -

मुद्राराक्षस के नाटकों में पात्र की मानसिकता और भावमयी स्थिति की अभिव्यक्ति के लिए या किसी बात की सूचना देने के लिए कुछ स्थलों पर लंबे वाक्यों का प्रयोग भी हुआ है, पर शब्द-वाक्य, लघु वाक्य, खंडित, लुप्तांशिक या अधूरे वाक्यों की तुलना में यह प्रवृत्ति कम ही दिखाई देती है। साधारणतया मुद्राराक्षस के नाटकों में इस प्रकार का वाक्य तीन या चार पंक्तियों का होता है जैसे -

डिस्पैचर : कार्यालय के सभी कर्मचारियों को सूचित किया जाता है कि वे ठीक साढ़े दस बजे कार्यालय के बरामदे में एकत्र हों ताकि कुमारी कंचन रूपा की असामयिक मृत्यु पर सब लोग उनकी आत्मा के लिए शांति की कामना कर सकें।[65]

ई· प्रश्नवाचक वाक्यों का प्रयोग -

मुद्राराक्षस के नाटकों में प्रश्नवाचक वाक्यों का प्रयोग कई ढंग से हुआ है। उनके पात्र कभी पृच्छा के लिए इसका प्रयोग करते हैं, कभी केवल प्रश्न के लिए प्रश्न करते हैं, कभी दूसरे पात्र को कोंचने या उसे पीड़ा पहुँचाने के लिए इसका प्रयोग करते हैं तो कभी खुद ही प्रश्न करते हैं और खुद ही उसका उत्तर भी देते हैं।

सामान्यतः प्रश्नवाचक वाक्य नाटक में पात्र की पृच्छा को व्यक्त करता है। यहाँ एक पात्र प्रश्न करता है और दूसरा पात्र उसका उत्तर देता है। एक उदाहरण दृष्टव्य है-

युवक : आपके यहाँ कितने सदस्य हैं ?

आदर्श : फिलहाल तीन।

युवक : फिलहाल यानी ?

आदर्श : मुमकिन है कि कल यहाँ तीन में से एक भी न मिले।

युवक : अच्छा उसे छोड़िए। आपका धर्म ?

आदर्श : मरजीवा।[66]

कभी-कभी प्रश्न का स्वरूप शुद्ध अभिधा में न होकर लक्षणा व्यंजना में होता है। इसे मिथ्या पृच्छा भी कहते है, क्योंकि पात्र केवल प्रश्न के लिए प्रश्न करता है, उसे प्रश्न का उत्तर अपेक्षित नहीं होता। मुद्राराक्षस के "तेन्दुआ" में "जूता" और "कोट" संबंधी लड़कों के प्रश्न इसी प्रकार के हैं।

मुद्राराक्षस के असंगत नाटकों के पात्र कभी-कभी कोई झूठी या कल्पित प्रेम-कहानी गढ़कर शब्दों से एक-दूसरे को कोंचते है। एक-दूसरे को पीड़ा पहुँचाना ही इन

वाक्यों का उद्देश्य होता है। "मरजीवा" और "तिलचट्टा" में पति-पत्नी इसी उद्देश्य से एक-दूसरे को कोंचते है। "मरजीवा" में फिलासफर की चर्चा के दौरान आदर्श और भूमि के प्रश्न इसी प्रकार के हैं। इसी प्रकार "तिलचट्टा" में केशी अपने पति को बार-बार कोंचती है- "क्यों ? चुप क्यों हो गये ?"[67]

मुद्राराक्षस के पात्र कभी-कभी प्रश्न के साथ-साथ उसका उत्तर भी प्रस्तुत करते हैं। अर्थात वे स्वयं ही प्रश्न करते हैं और स्वयं ही उसका उत्तर देते हैं। जैसे-

"तुम क्या समझ रही हो फोटोग्राफर आ गया ? हो सकता है पुलिस अफसर हो। मिनिस्टर लौट आया हो और..[68]

"कितने दिन हुए यह बल्ब टूटे हुए ? मैं समझता हूँ बहुत दिन हो गए हैं।[69]

"लेकिन इसमें उसकी क्या गलती ? जो कुछ हुआ-तुम्हीं ने चाहा था।"[70]

"और फिर जाओगे कहाँ ? सारी जमीन तो हाकिम की है।"[71]

कभी-कभी मुद्राराक्षस ने "न" के साथ प्रश्नवाचक वाक्यों का प्रयोग किया है। "न" से युक्त ये प्रश्नवाचक वाक्य अनुनय-विनय, आत्मीयता, आग्रह, अनोपचारिकता, सत्यापन आदि की अभिव्यक्ति में बडे सहायक हुए हैं; जैसे,-

"आपने शायद मुझे पहचाना नहीं। नहीं न ?"[72]

"तुम तो अब मर चुकी हो न ?"[73]

"दरवाजे ठीक से बन्द है न ?"[74]

"इसी जगह खड़ा होना था न ?"[75]

10. **शब्द-चयन की प्रवृत्तियाँ** -

मुद्राराक्षस की भाषा में शब्द-चयन की दृष्टि से निम्नलिखित विशेषताएँ दिखाई देती हैं-

अ. **बोलचाल के शब्दों का अधिकाधिक प्रयोग** -

मुद्राराक्षस के असंगत नाटकों की भाषा आम बोलचाल की साहित्यिक भाषा है। भाषा में वे व्याकरण से अधिक संस्कार महत्त्व देते हैं।[76] इसीलिए उनके निम्न वर्ग के पात्रों की भाषा में न अर्थ-संतुलन दिखाई देता है, न संस्कार शुद्धि। उनकी भाषा में बोलचाल के शब्दों का अधिकाधिक प्रयोग हुआ है। इन शब्दों में कुछ शब्द तो ऐसे हैं, जो हिन्दी की विभिन्न बोलियों से गृहीत हुए हैं और कुछ ऐसे देशज शब्द भी हैं जो अब तक साहित्य में उपेक्षित रहे हैं। "योर्स फेथफुली" में एग्जिमा, उबकाई, फफूँद तथा नसबंदी आदि।"तेन्दुआ"

में चूतड, कुटाई, कुटम्मस आदि शब्द ऐसे ही हैं।

ब· अंग्रेजी शब्दों की भरमार -

मुद्राराक्षस के असंगत नाटकों में जहाँ एक ओर निम्न वर्ग के अनपढ़ और गँवार पात्रों की भाषा में बोल-चाल के शब्दों की अधिकता दिखाई देती है वहाँ दूसरी ओर उच्च वर्ग के शिक्षित पात्रों की भाषा में अंग्रेजी शब्दों की भरमार भी पायी जाती है। उदाहरण के लिए मेकप, फोटोग्राफर, माडलिंग, स्कूल मैनेजमेंट, प्लानिंग मिनिस्टर, एपाइन्टमेंट, ऐक्सेप्ट, कैमेरा आदि (**मरजीवा**), एफीशिएन्सी बार, होम मिनिस्ट्री, डिस्पैचर, स्टेनो, रजिस्टर, टेलीफोन, कमीशन, ग्रेज्युएट, वेस्ट पेपर, परमिशन, डिसिप्लिन, इन्क्वायरी, डियर सर, गवर्नमेंट आदि (**योर्स फेथफुली**), बेडरूम, एलार्म, सायरन, इन्फेक्शन, टाइमबम, मेडिकल चेकप, इंजेक्शन, वार्निंग आदि (**तिलचट्टा**), स्प्लैण्डिड, टेक्श्चर, पावर्टी, रोमान्स, डिसैपियर्ड, एकेडेमिक स्टाफ, थर्ड डिग्री मैथड, एक्साइट, एक्लेमेटाइज, एक्जेक्टली, डिवाइस, पैंथर, वल्गैरिटी आदि (**तेन्दुआ**)।

मुद्राराक्षस की भाषा में अंग्रेजी शब्दों के साथ-साथ छोटे-छोटे अंग्रेजी वाक्यांशों और वाक्यों की भी भरमार दिखाई देती है। उदाहरण के लिए यू डोण्ट नो, नाऊ यू हैव कमिटेड, यू हैव ऐक्सेप्टेड इट, आई शैल नाट गो, आई वाण्ट पावर आदि (**मरजीवा**), गुड मार्निंग सर, आफिस आर्डर नम्बर सच एण्ड सच, प्वाइंट आफ आर्डर सर, पावर्स हैव बीन डेली गेटेड टु मी, दैट डे आई फेल्ट गिल्टी आदि (**योर्स फेथफुली**), आई वाण्ट इट बैक, आई हेट हिम, यू काण्ट डाइ लाइक दिस।, दे काण्ट टेक हिम अवे। आदि (**तिलचट्टा**), आई वाण्ट ए ब्रूट, आई लाइक पावर्टी, एक्जेक्टली दि सेम ही वाज सेक्सुअली एक्साइटेड, वी शैल जस्ट बम्बार्ड हिज नर्व्ज़ विद साउण्ड्स, द होल लाइफ दे स्टार्व एण्ड दे लिव, आदि (**तेन्दुआ**)।

क· अन्य भाषाओं के शब्द -

मुद्राराक्षस की नाट्य-भाषा में बोलचाल और अंग्रेजी शब्दों के अतिरिक्त अरबी, फारसी, संस्कृत आदि अन्य भाषाओं के शब्द भी भाषा की मूल प्रकृति में घुलकर प्रचुर मात्रा में प्रयुक्त हुए हैं। कुछ उदाहरण दृष्टव्य हैं-

अरबी शब्द :-

जैसे, मुग़ालता, जलालत, फिलहाल, मुफ़लिस, इकबाल, बयान आदि (**मरजीवा**), इन्कलाब, जलसा, जुलूस, किस्सा, दफ्तर, मुखातिब, ताज़ुब, आदि (**योर्स फेथफुली**), हवालात, शक्ल, वाहियात, अहमियत, वजूद, शराब, हर्ज आदि (**तिलचट्टा**), महफ़िल, हाकिम, बागी, संतरी, जिस्म, गनीमत, मरम्मत, किताब, आदि (**तेन्दुआ**)।

फारसी शब्द -

जैसे, यादगार, आमदनी, जहर, खामोश, निगाह, गवाही आदि (**मरजीवा**), सरकार, सख्त तनख्वाह, मलहम, शर्मिंदगी, आस्तीन, सुर्ख आदि (**योर्स फेथफुली**), होशियारी, शीशा, तकिया, दरख्त, खूंखार, अफसोस आदि (**तिलचट्टा**), खुशबू, जानवर, तहखाना, गिरफ्तार, आवाज़, कागज, लाश आदि (**तेन्दुआ**)।

संस्कृत शब्द -

जैसे, संस्कार, आदर्श, नमस्कार, आश्वासन, सुरक्षा, संदेह,आदि (**मरजीवा**), प्रतिज्ञा, वेतन, परमधाम, पुण्यात्मा, अनुशासन, समाचार, महिला, क्षत्रिय, आदि (**योर्स फेथफुली**), समाधि, सुविधा, आतंकवादी, आदि (**तिलचट्टा**), प्रधानमंत्री, भाषण, विस्फोट, अतिथि, सुरुचि, दल आदि (**तेन्दुआ**)।

उपर्युक्त शब्दों के अतिरिक्त मुद्राराक्षस की नाट्य-भाषा में **तुर्की भाषा** के भी कुछ शब्द पाये जाते हैं, जैसे तमंचा, तमगा, जुराबें आदि। कुछ स्थलों पर ऐसे शब्द भी प्रयुक्त हुए हैं, जो अरबी और फारसी के मेल से बने हैं, जैसे खतरनाक (अरबी+फारसी), दरअसल (फारसी+अरबी), होश-हवास (फारसी+अरबी), खूबसूरत (फारसी+अरबी), नामुमकिन (फारसी+अरबी) आदि।

ङ· **अपशब्दों के प्रति आग्रह** -

जीवन की सच्चाई को उसके नंगेपन के साथ प्रस्तुत करने एवं आकर्षण पैदा करने के उद्देश्य से मुद्राराक्षस ने अभिजात्य मर्यादा को त्यागकर भाषा का एक भिन्न ही तेवर अपनाया है। इसी कारण उनकी भाषा में फूहड़, अनगढ़, अश्लील, भोंडे, अनलंकृत और कर्णकटु शब्दों की अधिकता दिखाई देती है। डॉ·गोविंद चातक के अनुसार इस भाषा की शक्ति उसकी तीखी पैनी मार, तनाव, आक्रोश की तिलमिलाहट, छीछालेदर की प्रवृत्ति और अपशब्दों के निस्संकोच प्रयोग में निहित है।[77]

मुद्राराक्षस इस प्रकार के शब्द-प्रयोग में विशेष दक्ष दिखाई देते हैं। वे "सोना", "करना" जैसे सामान्य शब्दों से ही यौन क्रिया का संकेत दे डालते हैं। कहीं-कहीं शब्दों के अश्लील प्रभाव को ढकने के लिए अंग्रेजी शब्दावली का भी प्रयोग हुआ है, जैसे "ये देखिए सर, टापलेस हर ब्रेस्ट ब्युटिफुल···सीना अच्छा है।"[78] साला, पागल, बेवकूफ, बदमाश, पाजी, हरामज़ादा, हरामी का पिल्ला, मक्कार, अहमक, सूअर, चूतड, कूल्हा, काना कुत्ता, ससुरा जैसे शब्द तो जगह-जगह पाये जाते हैं। इस प्रकार के शब्दों से युक्त भाषाशैली का एक उदाहरण दृष्टव्य है- "अरे साले को धूप में लिटा दे। उलट। मादर··।

(हवलदार से) एई माधो, देखो ट्रक गया या अभी है। उनको बोलकर आओ मैजिस्ट्रेट साला आए न आए लाठी चार्ज करें। साला··हद हो गई। गोदाम लूटेंगे। अरे बोल के आ··।"[79]

11· **मुहावरों का प्रयोग** -

मुद्राराक्षस के नाटकों में यत्र-तत्र कुछ मुहावरों का भी प्रयोग हुआ है। इन नाटकों में प्रयुक्त हुए मुहावरों में से कुछ मुहावरे पूर्व-प्रचलित हैं तो कुछ मुहावरे उन्होंने शब्दों की तोड-मरोड़ करके नये बनाये हैं, यथा- धाक जमाना, मुगालते में रहना, कान्फेस करना, गरम होना, तस्वीर आँखों में लेकर मरना, टखने तोड़ देना, चूतड़ों पर डण्डे लगाना, भुस भर देना, खबरें देना, कुटाई करना, कुटम्मस कर· देना, टार्चर करना, कच्चा चबा जाना, दिमाग चटक जाना, आदि। फिर भी हमें यह स्वीकार करना पड़ता है कि मुद्राराक्षस की भाषा में मुहावरों, लोकोक्तियों और ध्वनि-गुण सम्मत पदों या शब्दों का प्रयोग अल्पमात्रा में ही हुआ है। संक्षेप में मुद्राराक्षस की भाषा आधुनिक हिंदी नाटककारों की भाषा में अपना विशिष्ट स्थान है।

5· **गीत एवं संगीत योजना** -

नाटक दृश्य-श्राव्य विधा होने के कारण नाटक में गीत एवं संगीत योजना का भी स्थान महत्त्वपूर्ण है। डॉ·शांति मलिक के अनुसार "नाटक" में यह साधन अलंकार-मात्र न होकर नाटककार के अभिव्यंजना शिल्प का एक सफल, महत्त्वपूर्ण एवं अत्यंत प्रभावशाली उपकरण है।"[80] वस्तुतः गीत एवं संगीत का मनुष्य के वास्तविक जीवन से अत्यल्प ही संबंध होता है और मुद्राराक्षस के नाटक तो जीवन के नग्न यथार्थ को ही विसंगतियों के माध्यम से रेखांकित करते हैं। परिणामस्वरूप उनके असंगत नाटकों में इनका प्रयोग अत्यंत अल्प मात्रा में हुआ है। **"मरजीवा"** और **"तिलचट्टा"**में तो इनका प्रयोग बिल्कुल नहीं हुआ है। **"योर्स फेथफुली"** में भी संगीत का प्रयोग नहीं है, और रूढ़ अर्थ में कोई गीत भी इसमें नहीं है, हाँ, कंचन रूपा की शोक सभा के समय "सारे जहाँ से अच्छा··" गीत का विडम्बनात्मक प्रयोग[81]वहाँ अवश्य हुआ है।

गीत एवं संगीत प्रयोग की दृष्टि से मुद्राराक्षस का **"तेन्दुआ"** नाटक विशेष उल्लेख्य है। नाटक के आरंभ में ही तीन मैले से लड़के "उठ जाग मुसाफिर भोर भई··"[82] गीत प्रस्तुत करते हैं। इसी प्रकार राजा दशरथ के बेटे राम की छठी के प्रसंग पर आधारित "छापक पेड़ छिउलिया" त पतवन गहबर हे तेहि तर ठाढ़ि हिरनिया हो रामा··"[83] लोकगीत की नाटक में कई बार आवृत्तियाँ हुई है। नाटक में ये गीत अत्यंत स्वाभाविक

ढंग से और दृश्य के अनिवार्य अंग के रूप में प्रस्तुत हुए हैं। इसीलिए डॉ॰वशिष्ठ नारायण त्रिपाठी ने कहा है- "मुद्राराक्षस के नाटकों में काव्य नाटक की आत्मा का पोषक बनकर आया है। इससे नाट्यकथा की प्रकृति और गति का तो भला होता ही है, चरित्र एवं नाट्यप्रभाव की दीप्ति भी बढ़ जाती है।"[84]

गीत के साथ-साथ प्रस्तुत नाटक में संगीत का भी सटिक प्रयोग हुआ है। आमतौर पर संगीत का प्रयोग मनोरंजन एवं आनंद के लिए होता है, पर यहाँ उसका प्रयोग माली को यातना देने के लिए हुआ है। कभी रम्बा-रम्बा का भरा हुआ संगीत[85] सुनाई पडता है तो कभी फॅक्ट्री, ट्रैफिक और सायरन आदि का मिला-जुला स्वर।[86] इसी प्रकार टार्चर के इस सिलसिले में इलैक्ट्रानिक म्यूज़िक और अल्ट्रा सोनिक साउंडस् का भी प्रयोग किया गया है।[87] यहाँ यह बात भी महत्त्वपूर्ण है कि संगीत के लिए वाद्य-यंत्रों का प्रयोग नहीं हुआ, बल्कि अलग-अलग प्रकार की संगीत अभिव्यक्ति टेप द्वारा की गई है। तात्पर्य यह कि प्रस्तुत नाटक की गीत एवं संगीत योजना सशक्त और नवीन आस्वाद देने वाली है।

6· **बिम्ब एवं प्रतीक योजना** -

असंगत नाटककार जीवन की विषमताओं, विद्रूपताओं और विसंगतियों को प्रतीकात्मक सांकेतिक और नाटकीय शैली में अभिव्यक्त करते हैं। परिणामस्वरूप इनके नाटकों में बिम्बों और प्रतीकों की अधिकता पायी जाती है। मुद्राराक्षस ने भी अपने असंगत नाटकों में बिम्बों और प्रतीकों का प्रयोग किया है जो पात्रों के यथार्थ जीवन की विसंगतियों को तो उजागर करता ही है, पर साथ ही साथ नाटकीय वातावरण भी प्रस्तुत करता है। तात्पर्य यह कि मुद्राराक्षस के असंगत नाटकों में बिंब और प्रतीक दोनों भी प्रभावोत्पादक अभिव्यक्ति के सशक्त उपादान बनकर उभरते हैं।

बिम्ब-योजना -

"बिम्ब" अंग्रेजी शब्द "इमेज" (Image) का हिन्दी रूपांतर है, जिसका शाब्दिक अर्थ किसी पदार्थ को प्रतिबिंबित करना होता है। डॉ॰ओउम् प्रकाश अवस्थी के अनुसार शुद्ध बिम्ब का अर्थ मात्र मानसिक मूर्त या अमूर्त की कल्पना या प्रतिकल्पना है। इसे छवि या प्रतिच्छवि और रूप या प्रतिरूप भी कहा जा सकता है।[88] आधुनिक साहित्य के क्षेत्र में बिम्ब शब्द के अर्थ में काफी परिवर्तन हुआ है। डॉ॰मृदुला गुप्ता के अनुसार अब वह उन सभी काव्यगत विशेषताओं का बोधक बन गया है जो पाठक को ऐन्द्रिय चेतना के किसी भी स्तर पर प्रभावित करती है।[89] अर्थात आज वह मनुष्य की सम्पूर्ण मानसिक

प्रक्रिया का बोधक बन गया है। चित्रकला में जो काम रंग और रेखाओं द्वारा लिया जाता है, बिम्ब-विधान में वही काम भावगर्भित शब्दों द्वारा लिया जाता है, अतः उसे भावगर्भित शब्द-चित्र कह सकते हैं।

मुद्राराक्षस ने विरूप दृश्यों, पात्रों के जीवन की विसंगतियों और उनके मनोवैज्ञानिक यथार्थ को उद्‌घाटित करने के लिए बिम्ब-योजना का सार्थक प्रयोग किया है। उनके असंगत नाटकों मे अनेक नाटकीय बिम्ब उभरे हैं जिनमें से कुछ अत्यंत सटीक और सार्थक बन गये हैं तो कुछ अस्पष्ट रह गये हैं। **"मरजीवा"** में आदर्श के बूढ़े बाप द्वारा भूमि के फोटो उतारना, आदर्श द्वारा पिता और पत्नी की हत्या, पुलिस अफसर के हाथों युवक की हत्या और मिनिस्टर शिवराज गंधे के षड्यंत्र में आदर्श की हत्या के प्रसंग सार्थक बिम्ब प्रदान करते है। सम्पूर्ण नाटक में नाटककार ने मृत्युबोध की स्थिति उभारने की कोशिश की है जो नाटक का मूल बिम्ब है। इसके अतिरिक्त अन्य भी छोटे-छोटे बिम्ब जैसे फिलासफर, चूहेमार व्यक्ति आदि नाटक में उभरतें हैं पर वे सार्थक नहीं बन पाते।

"योर्स फेथफुली" में अनेक नाटकीय बिम्ब उभरे हैं। नाटक के आरंभ में ही अफसर द्वारा अपने मातहत कर्मचारियों को शपथ दिलाने का प्रसंग सरकारी कर्मचारियों की त्रिशिष्ट स्थिति का बिम्ब उभारता है। मरी हुई कंचन रूपा की सम्पूर्ण नाटक में उपस्थिति और उसकी उपस्थिति में ही उसकी शोक-सभा का आयोजन एक अभूतपूर्व नाटकीय बिम्ब उपस्थित करता है। दफ्तर के कर्मचारियों का चाबी के सूराख से अफसर और कंचन रूपा के संभोग-दृश्य को देखने की कोशिश करना भी एक अपूर्व नाटकीय बिम्ब प्रस्तुत करता है। इसी प्रकार चपरासी द्वारा सुनाया गया किस्सा जिसमें एक आदमी नदी में बहती किसी औरत की फूली हुई लाश के साथ सम्पर्क करने की कोशिश करता है, एक सार्थक बिम्ब प्रदान करता है जो अफसर के आचरण का सहधर्मी है। इसके अतिरिक्त रबर के गुड्डे का हाथ, डिस्पैचर का वेश्या के पास जाने से संबंधित प्रसंग, हाथ कटे हुए पहले क्लर्क द्वारा जुलूस से लाया हुआ खून से लथपथ झण्डा तथा तीसरे क्लर्क की आत्महत्या का प्रसंग, सार्थक बिम्ब प्रदान करते हैं।

बिम्ब-विधान की दृष्टि से **"तिलचट्टा"** नाटक भी महत्त्वपूर्ण है, जिसमें अनेक बिम्ब उभरते हैं। सम्पूर्ण नाटक में पति-पत्नी देव और केशी के बीच उपस्थित तीसरे आदमी की स्थिति नाटक का मूल बिम्ब है। बकरे की बोली बोलने वाला काला आदमी, केशी के अस्पताल का काला डॉक्टर और पुलिस हवालात से भागा हुआ फरार आतंकवादी उसी के प्रतिरूप हैं। इसके अतिरिक्त देव के अचानक मरे हुए कुत्ते का प्रसंग, देव और केशी के स्वप्न-दृश्य, घड़ी का डायल, केशी के कुत्ते के पिल्ले सदृश्य बच्चे का संदर्भ आदि भी सार्थक बिम्ब प्रदान

करते हैं। नाटक में मफतलाल संबंधित बिम्ब स्पष्ट नहीं है। "तेन्दुआ" नाटक में लोकगीत के भाव को लेकर लड़कों का रिहर्सल करना, मिसेज रेनु राय और मिसेज मदान द्वारा माली को टार्चर करने का प्रसंग एवं प्रधानमंत्री का भाषण आदि सार्थक बिम्ब बन कर उभरते हैं।

<u>प्रतीक योजना</u> -

"प्रतीक" शब्द प्रति-इक के मेल से बना है। डॉ॰ केदारनाथ सिंह के अनुसार "प्रतीक" वह वस्तु है जो किसी अन्य वस्तु से रूप, गुण, आकार, व्यापार आदि में समता रखती है। और उस अव्यक्त वस्तु का प्रतिनिधित्व करती हुई, बोध देती है।[90] वास्तव में "प्रतिकात्मकता नाट्य विधा की मूलभूत प्रवृत्ति है। यह प्रवृत्ति हर नाटक में किसी न किसी रूप में अवश्य विद्यमान रहती है। साठोत्तरी हिन्दी नाटककार नाटकीय प्रतीक विधान के प्रति विशिष्ट रूप से सचेत है। वह जिन विषम परिस्थितियों में से गुजर रहा है, उनकी नाटकीय अभिव्यक्ति के लिए प्रतीकात्मक शैली ही अत्यंत उपयुक्त है।"[91] मुद्राराक्षस ने भी अपने असंगत नाटकों में आधुनिक युग की संवेदना, बौद्धिक नपुंसकता, जीवन की निरूद्देश्यता और लक्ष्यहीनता, राजनीतिक नेताओं की स्वार्थपरता, व्यवस्था के विभिन्न पक्षों में व्याप्त भ्रष्टाचार तथा मानव जीवन की विभिन्न असंगतियों की नाटकीय अभिव्यक्ति के लिए प्रतीकात्मक शैली को अपनाया है।

मुद्राराक्षस का "मरजीवा" एक प्रतीकात्मक नाटक है जिसमें पात्र एवं घटनाएँ दोनों भी प्रतीकात्मक हैं। मिनिस्टर शिवराज गंधे आधुनिक नेताओं की सत्तान्धता, स्वार्थान्धता, और अवसरवादी वृत्ति का प्रतीक है। नाटक के मुख्य पात्र आदर्श और भूमि आजीविका के लिए लालायित आज के बुद्धिजीवी युवावर्ग के प्रतीक हैं, जो न तो व्यवस्था की असंगतियों से समझौता कर पाते हैं और न ही उन्हें झेल पाते हैं। परिणामस्वरूप धीरे-धीरे टूटकर आत्महत्या या हत्या की यातना को स्वीकार करना ही उनकी नियति बन जाती है। शिवराज गंधे द्वारा आदर्श की हत्या वास्तव में अकेले आदर्श की हत्या न होकर आदर्श जैसे सभी सामान्यजनों की हत्या है, जो आज के राजनीतिक-सामाजिक विषमताओं और विसंगतियों के बीच जीने के लिए अभिशप्त हैं। वस्तुतः आदर्श के रूप में गंधे ने मानवीय आदर्श की ही हत्या की है। आदर्श का टूटानगर के बेकारगंज मुहल्ले में रहना भी प्रतीकात्मक है। "टूटानगर" उसके टूटे व्यक्तित्त्व का और "बेकारगंज" उसकी बेकारी तथा बेरोजगारी का प्रतीक है। युवक सत्येन बोस गांगुली जो पुलिस के अत्याचारों का शिकार बनकर अपने प्राणों से हाथ धो बैठता है, पुलिस-व्यवस्था के भ्रष्ट, अमानवीय और शोषक रूप को व्यक्त

करता है। इसी प्रकार नाटक के अन्य पात्र भी- पुलिस अफसर,हवलदार माधो, पत्रकार और चूहेमार व्यक्ति आदि- व्यवस्था के विभिन्न पक्षों में व्याप्त भ्रष्टाचार और अनैतिक आचरण को प्रस्तुत करने के प्रतीक ही हैं। तात्पर्य यह कि नाटक के सभी पात्र एवं घटनाएँ प्रतीकात्मक ढंग से समसामायिक युग की विसंगतियों और दमघोंट परिवेश को रूपायित करने में पूर्णतः समर्थ हैं।

"योर्स फेथफुली" नाटक के सभी पात्र वर्ग विशेष के प्रतिनिधि पात्र हैं। कार्यालय का अफसर भ्रष्ट शासन-व्यवस्था का एक यांत्रिक पूर्जा है, जो अपने वर्ग के समूचे संस्कारों को वहन करता है। कार्यालय के कर्मचारी, जिनका व्यक्तित्त्व सेवा-संहिताओं में दबकर समाप्त हो चुका है और जो निरन्तर अपनी ही शोक सभा की तालश में हैं, शोषित वर्ग के प्रतीक होने के साथ-साथ अपने वर्ग के भी प्रतिनिधि हैं। इसीलिए नाटककार ने संकेत दिया है कि सभी चेहरे मुखोटों जैसे दीखते हैं। खुद मुखोटे भी इस नजर से इस्तेमाल किये जा सकते हैं।[92] अफसर और कंचन रूपा के संभोग दृश्य का अतिरंजित प्रसंग अपनी स्वार्थ-पूर्ति के लिए अफसर द्वारा अपने अधीनस्थ कर्मचारियों के साथ कुछ भी घिनौना करने को संकेतित करता है। चपरासी द्वारा वर्णित नदी में बहती किसी औरत की फूली हुई लाश के साथ सम्पर्क करने का प्रसंग भी प्रतीकात्मक है, जो अफसर की पशु-वृत्ति को और गहरा करता है। इसी प्रकार कर्मचारियों का कार्यालय में काम के बदले गप्पे हाँकना सरकारी कर्मचारियों की निष्क्रियता और उदासीनता का द्योतक है।

"तिलचट्टा" में देव और केशी के चरित्र स्त्री-पुरूष संबंधो के विघटित सेक्स को रूपायित करते हैं। नाटक के स्वप्नदृश्य भी इस दृष्टि से अपना विशिष्ट महत्त्व रखते हैं, जो देव और केशी के अवचेतन मन को उघाड़कर रख देते हैं। स्वप्न-दृश्य में देव और केशी का जंगल के अंधेरे में भटक जाना और रास्ता न पाना प्रतीकात्मक हैं। जीवन में भी वे एक-दूसरे से भटक गए है। केशी के चरित्र को लेकर देव के मन में संदेह हैं, जिससे सही मार्ग पर अग्रसर होना उसके लिए कठिन हो गया है। यहाँ जंगल देव के मन का प्रतीक है और अंधेरा उसके मन के संदेह को सूचित करता है। "स्वप्नदृश्य के पिंडारी उस उगते हुए नये आतंकवादी दल के प्रतीक है, जिससे पूँजीवादी मफतलाल सदैव भयभीत रहे हैं।"[93] इसी प्रकार संवादों के बीच-बीच में देव का अचानक मौन हो जाना मध्यवर्गीय पुरूष की नपुंसकता का सशक्त प्रतीक है।

प्रतीकात्मकता की दृष्टि से प्रस्तुत नाटक की यह एक महत्त्वपूर्ण विशेषता है कि इसमें नाटककार ने विषय की अभिव्यक्ति के लिए कुछ पशु-प्रतीकों का प्रयोग किया

है, जो हिन्दी नाट्य साहित्य के इतिहास में एक सर्वथा नवीन और मौलिक प्रयोग माना जायेगा। इस दृष्टि से तिलचट्टा, कुत्ते का भौंकना और बकरे की बोली के प्रयोग विशेष दृष्टव्य हैं। नाटक में तिलचट्टे का प्रतीक दोहरे अर्थ में प्रयुक्त हुआ है। एक अर्थ में वह काले आतंकवादी का प्रतीक है तो दूसरे अर्थ में वह सड़न, सीलन, गंदगी और अंधेरे में रहने वाली मनुष्य की यौन भावना का प्रतीक है। तिलचट्टा और आतंकवादी दोनों भी चालाक होते हैं, दोनों भी अंधेरे में रहते हैं, दोनों की भी पैदाइश संदिग्ध होती हैं, दोनों भी बत्ती जलते ही कहीं गायब हो जाते हैं दोनों से भी लोग डरते हैं, और दोनों का भी पूरा सफाया करना कठिन होता है। देव कहता है- "तिलचट्टे बड़े चालाक होते हैं··आतंकवादियों के बारे में भी उसका यही खयाल है।"[94] केशी का स्वप्न-दृश्य तिलचट्टे के प्रतीक को और स्पष्ट करता है।यहाँ "तिलचट्टा' मानव मन की सड़न, सीलन और अंधेरे में रहने वाली यौन कुंठाओं के लिए एक सटीक प्रतीक के रूप में मानवीय नियति की त्रासदी को उभारता है।"[95]

समसामयिक युग में यौन भावनाओं के संदर्भ में दिखाई देने वाली स्वतंत्रता और उन्मुक्तता इसी ओर संकेत करती है कि तिलचट्टे की तरह सड़न, सीलन, गंदगी और अंधेरे में रहने वाली यौन भावनाएँ अब मुक्त हुई है, जिनसे किसी भी हालत में बचा नहीं जा सकता। केशी का कथन इस दृष्टि से दृष्टव्य है- "कोई फायदा नहीं, आखिरी जीत उसी की होगी···अब कोई भी विरोध बेकार है···सड़न से बाहर आ चुका है वह··"[96] वास्तव में तिलचट्टा एक साथ कई भूमिकाओं में उतरता है। अतः डॉ·चंद्रशेखर के शब्दों में हम कह सकते है कि- "यह "तिलचट्टा" कौन है ? और कोई नहीं प्रत्युत "मरजीवा" और "तेन्दुआ" ही है। अथवा "योर्स फेथफुली" का क्लर्क एक है जो लाल झण्डे को अपना कटा हुआ हाथ मान लेता है। वे सभी पुनः एक होकर "तिलचट्टा" की भूमिका में उतरे हैं।··वही काला आदमी है और काला डाक्टर भी। वही बकरे की बोली बोलने वाला गुंडा भी है। वही भौंकने वाला कुत्ता भी है और वही एक अंश में केशी भी। वही पिंडारी एक भी और पिंडारी दो भी।"[97] प्रस्तुत नाटक में कुत्ते का बार-बार भौंकना भी सांकेतिक है। इसी प्रकार काले आदमी द्वारा बकरे की बोली बोलते हुए केशी का पीछा करना उसकी प्रबल यौनेच्छा को सूचित करता है। कुल मिलाकर प्रतीक योजना की दृष्टि से "तिलचट्टा" एक सफल नाटक है।

"तिलचट्टा" की तरह मुद्राराक्षस का "तेन्दुआ" भी एक सशक्त पशु-प्रतीक नाटक है। नाटक के पात्र एवं घटनाएँ भी प्रतीकात्मक हैं। पुलिस कमिश्नर भूषणराय वर्तमान

भ्रष्ट पुलिस व्यवस्था का प्रतीक होने के साथ-साथ अपनी पत्नी के अधिकार में रहने वाले नपुंसक पुरुष का भी प्रतिनिधित्व करता है। उच्च वर्ग की सुविधाभोगी महिलाएँ रेनु राय और मिसेज मदान विकृत काम-भावना और जघन्य अपराधवृत्ति को रूपायित करती हैं। नाटक में प्रयुक्त लड़के, माली और माली की स्त्री निम्न वर्ग के पात्र हैं, जो यह भली भाँति जानते हैं कि बड़े लोगों के सामने सिर झुकाकर खड़े होने, मुँह बंद रखने या आँखे फेरे लेने और अत्याचार को चुपचाप सहने में ही उनकी खैरियत है। माली की मृत्यु पर उसकी स्त्री का चूड़ियाँ फोड़ना उसके सौभाग्य के लूट जाने का प्रतीक है और उसका मौन विलाप उसकी विवशता का सूचक है।

मुद्राराक्षस ने प्रस्तुत नाटक में प्रतीकों के प्रचलित अर्थ में कुछ परिवर्तन भी किया है, जैसे "घास" का प्रतीक। "यहाँ "घास" को आभिजात्य वर्ग के एक बहुमूल्य उपकरण के रूप में स्वीकार किया गया है, जबकि सामान्यतः घास का प्रतीक आम जनता क लिए ही प्रयुक्त होता है।"[98] नाटक की वेशभूषा भी प्रतीकात्मक है। नाटक के आरंभ में ही तीन मैले से लड़के जूट के बोरे के थैले जैसे पहने हुए आते हैं।[99] उनकी यह वेशभूषा उनकी ग़रीबी, बेबसी और लाचारी को उभारती है। इसी प्रकार"छापक पेड़ छिउलिया " लोकगीत के भाव को लेकर लड़के और माली की स्त्री का अभिनय करना भी प्रतीकात्मक है। यहाँ नाटककार ने पुराने मिथक को तोड़कर उसे नया अर्थ देने की कोशिश की है। पुनाने मिथक के अनुसार राजा दशरथ के बेटे राम की छठी के प्रसंग में हिरन को मारकर उसके मांस की दावत मेहमानों को खिला दी जाती है और हिरन के खाल की खँझड़ी बनाकर वह राम को खेलने के लिए दी जाती है। इससे दुःखी हुई हिरनी ढ़ाक के पेड़ के नीचे खड़ी होकर मौन विलाप करती है। यहाँ रेनु राय और मिसेज मदान के टार्चर प्रसंग में माली मर जाता है और उसकी लाश फीशर नामक किसी गोरे डॉक्टर को दान दी जाती है। इससे दुःखी हुई माली की स्त्री रेनु के बंगले के बाहर मौन विलाप करती है। इस नये संदर्भ में माली हिरन का प्रतीक है और माली की स्त्री हिरनी का, जो हिरन (माली) की मृत्यु के कारण दुःखी है।

"तेन्दुआ" नाटक का विशेष महत्त्व पशु-प्रतीकों के सटीक प्रयोग में है। हिरन तथा हिरनी के अतिरिक्त नाटक का सबसे महत्त्वपूर्ण पशु-प्रतीक है "तेन्दुआ"। प्रस्तुत नाटक की प्रतीकात्मकता को स्वीकार करते हुए स्वयं नाटककार ने तेन्दुआ को माली का प्रतीक माना है।[100] पर कुछ आलोचक नाटककार के इस मत से सहमत नहीं है। डॉ·सुन्दरलाल

कथूरिया के अनुसार तेन्दुआ निरीह माली का प्रतीक न होकर इस नाटक में आई हिंस्त्र नारियों-मिसेज रेनु राय, विशेषकर मिसेज मदान का प्रतीक है।[101] डॉ·लक्ष्मीराय भी माली को तेन्दुआ का प्रतीक नहीं मानते। उनके शब्दों में "माली के रूप में उस जन -साधारण वर्ग का रूप उभरा गया है। जो सुविधाभोगी स्त्रेण वर्ग और व्यवस्था के शोषण और यातना का शिकार बनकर मारा जाता है।"[102] डॉ·शेखर शर्मा भी तेन्दुआ को माली का प्रतीक मानने के बदले अफसरशाही और फीताशाही को उसके असली रूप में उद्घाटित करने का प्रतीक मानते हैं।[103] इसी प्रकार डॉ·दशरथ ओझा और डॉ·सत्यवती त्रिपाठी भी माली को तेन्दुआ का प्रतीक नहीं मानते । डॉ·दशरथ ओझा के अनुसार तेन्दुआ मानव के पाशविक संस्कार समूह का प्रतीक है[104]तो डॉ·सत्यवती त्रिपाठी के अनुसार तेन्दुआ उच्च वर्ग के पाशविक संस्कारों और नैतिक स्खलन का प्रतीक है।[105]

हमारे मतानुसार तेन्दुआ मनुष्य के भीतर मौजूद पाशविक संस्कारों की अभिव्यक्ति के लिए ही सटीक प्रतीक है। इस अर्थ में वह माली और नाटक में आई हिंस्त्र महिलाएँ दोनों का प्रतीक बन जाता है। माली की आँखो में उभरने वाली मौन प्रतिहिंसा की भावना देखकर ही मिसेज मदान उसे ब्रूट या तेन्दुआ घोषित करती है।[106]किसी हिंस्त्र पशु को बाँधकर अगर कोई उसे यातनाएँ दें तो वह जिस प्रकार उन यातानाओं को चुपचाप सह लेता है उसी प्रकार माली भी रेनु राय और मिसेज मदान द्वारा दी गई यातनाओं को किसी बेज़ुवान पशु की तरह चुपचाप सह लेता है। एक पशु की तरह ही वह केवल चीखता-कराहता और काँपता रहता है या फिर भेदक और आहत नजरों से उनकी तरफ देखता रहता है। इस आधार पर माली को हम तेन्दुआ मान सकते हैं। इसके साथ ही साथ तेन्दुए की तरह सुन्दर और आकर्षक शरीर वाली ये हिंस्त्र नारियाँ इन्सान होकर भी जो पशुतुल्य, बर्बर, क्रूर और यंत्रणा भरा बर्ताव करती हैं उससे सिद्ध होता है कि प्रकृति से वे हिंस्त्र पशु या तेन्दुआ ही हैं। कुल मिलाकर हम कह सकते हैं कि प्रतीक योजना की दृष्टि से मुद्राराक्षस का प्रस्तुत नाटक एक सशक्त और सफल नाटक है।

7· <u>शीर्षकों के अभिनव प्रयोग</u> -

नाट्य-शिल्प की दृष्टि से शीर्षक का स्थान भी महत्त्वपूर्ण है। वास्तव में शीर्षक ही नाटक का प्रवेश द्वार होता है। नाटक अच्छा है या बुरा इसका बहुत कुछ पता शीर्षक से ही चलता है। इस अर्थ में शीर्षक नाटक का दर्पण बन जाता है। नाटककार अपने नाटक के द्वारा जो कुछ कहना चाहता है उसकी प्रतिछाया शीर्षक में अवश्य दिखाई देती है। अतः शीर्षक नाटककार की मूल संवेदना को वहन वहन करने वाला, संक्षिप्त, नया

और आकर्षक होना आवश्यक है। इस दृष्टि से जब हम मुद्राराक्षस के असंगत नाटकों के शीर्षक देखते-परखते हैं तो शीर्षक की उपर्युक्त कसौटियों पर उनके नाटकों के शीर्षक पूर्णतः खरे उतरते हैं।

"मरजीवा" नाटक का शीर्षक नाटक की केंद्रीय कल्पना को वहन करने में पूर्ण समर्थ है। प्रस्तुत नाटक में मुद्राराक्षस ने मुख्य रूप से मृत्युबोध को उभारना चाहा है। नाटक के आदर्श, भूमि आदि मुख्य पात्र इसी भावना से ग्रस्त दिखाई देते हैं। मुर्दमशुमारी के लिए आया युवक जब आदर्श से उसके धर्म के बारे में पूछता है तो आदर्श उसे अपना धर्म "मरजीवा" बताता है।[107] और सचमुच नाटक में आदर्श की स्थिति मरजीवा जैसी ही है। शिवराज गंधे से अपनी पत्नी भूमि को बचाने के लिए वह पत्नी के साथ आत्महत्या की कोशिश करता है, पर जहर नकली होने की वजह से वह बच जाता है। फिर पत्नी की हत्या करके वह स्वयं बिजली के तार से दुबारा आत्महत्या की कोशिश करता है, पर फ्यूज उड़ जाने से इस बार भी वह बच जाता है। फिर पत्नी की हत्या के जुर्म में वह इसलिए पुलिस स्टेशन पहुँचता है कि कम से कम वहाँ तो उसे फाँसी होगी, पर वहाँ भी उसे फाँसी नहीं होती। मिनिस्टर शिवराज गंधे और पुलिस अफसर अपने स्वार्थ के लिए राजनीतिक हथकण्डों में उसे फँसाकर आत्मदाह के लिए प्रवृत्त करना चाहते हैं, पर जब आदर्श इन्कार करता है तो जबर्दस्ती उस पर पेट्रोल छिड़ककर उसे जिन्दा जलाया जाता है। इस प्रकार सम्पूर्ण नाटक में आदर्श की "मरजीवा" स्थिति ही उभरती है, अतः नाटक का शीर्षक "मरजीवा" संक्षिप्त और मौलिक होने के साथ-साथ कथ्य के अनुरूप भी है।

"योर्स फेथफुली" में सरकारी कार्यालय के कर्मचारियों की एक दिन की दिनचर्या के माध्यम से नाटककार ने आज के नौकरी-पेशा कर्मचारियों की विवशताओं को व्यंजित किया है। उनकी स्थिति बहरे, गूँगे और अपाहिज व्यक्ति की तरह है। सेवा-संहिताओं में दबकर उनका व्यक्तित्त्व समाप्त हो चुका है। अफसर की इच्छा के खिलाफ न तो वे छुट्टी ले सकते हैं और न ही हड़ताल में शामिल हो सकते हैं। अफसर के अत्याचारों को चुपचाप सहना ही उनकी नियति है। वे अपने अफसर के "योर्स फेथफुली" बनकर ही नाटक में उपस्थित होते हैं। डिस्पैचर का व्यवस्था की नीति संबंधी कथन इस दृष्टि से दृष्टव्य है।[108] फण्डामेंटल रूल्स और कोड आफ काण्डक्ट के माध्यम से अफसर हमेशा उन्हें दबाकर रखता है। इस प्रकार नाटक का शीर्षक पात्रों की स्थिति के आधार पर रखा गया है, जो पूर्ण रूप से उचित और नया है।

"तिलचट्टा" एक पशु-प्रतीक नाटक है, तिलचट्टे की कुछ विशेषताएँ मानवीय भावनाओं से समानता रखती हैं। इसी आधार पर मुद्राराक्षस ने "तिलचट्टा" शब्द का प्रतीकात्मक प्रयोग किया है। तिलचट्टा की कुछ प्रमुख विशेषताएँ[109] इस प्रकार हैं-

1· तिलचट्टा एक छोटा, चपटा और लंबाकृति कीड़ा है।

2· उसके दो पंख होते हैं तथा उसकी पीठ के ऊपर एक संरक्षक कवच होता है।

3· उसका वर्ण मुख्यतया काला या घना पिंगल होता है।

4· प्रायः मादा तिलचट्टा काले रंग की होती है।

5· उसकी उत्पत्ति के संबंध में निश्चित जानकारी नहीं मिलती।

6· अक्सर वह अंधेरे में बाहर निकलता है।

7· गंदगी में रहने वाला यह कीड़ा सडी-गली चीजें जितनीं खाता है उससे ज़्यादा वहीं गंदगी फैलाता है।

8· घरों में वह ऐसी जगह रहता है जहाँ प्रवेश कर उसे पकड़ना मुश्किल होता है।

9· उसकी मूँछे लंबी और टाँगे नुकीली होती है।

उपर्युक्त विशेषताओं से युक्त छायाचित्र दृष्टव्य है-

सड़न, सीलन गंदगी और अंधेरे में रहने वाला यह कीड़ा मनुष्य की यौन भावना को प्रदर्शित करता है। नाटक के मुख्य पात्र देव और केशी दोनों में भी तिलचट्टे की कुछ विशेषताएँ दृष्टिगोचर होती हैं। दोनों भी यौन-विकृति से पीड़ित होकर अपनी-अपनी कुंठाओं में घुट रहे हैं। देव नामर्द आदमी है। उसे अपनी पुंसत्वहीनता ही तिलचट्टे के रूप में काटती रहती है। वास्तव में तिलचट्टा उसकी अपनी दुर्बलता का आतंक है जो बिस्तर पर अंधेरे में बार-बार उसे त्रस्त किये रहता है। देव की पत्नी केशी भी पति के रूप में देव जैसे नपुंसक पुरुष को पाकर गलत स्थितियों से जुड़ जाती है और उन्हीं परिस्थितियों में सड़न, सीलन और गंदगी में जीने के आदी तिलचट्टों के समान चोरी-

छिपे असामान्य यौन-विकृतियों की जिन्दगी जीती है।[110] स्वप्न-दृश्य में केशी से लिपटने की कोशिश करने वाला तिलचट्टा[111] वास्तव में उसकी कुंठाओं का ही प्रतिरूप है। अतः नाटक का शीर्षक "तिलचट्टा"नाटक के कथ्य और पात्रों की विशेषताओं के अनुरूप होने के कारण उचित तो है ही, पर साथ ही साथ एकदम नया, मौलिक और आकर्षक भी है।

"तेन्दुआ" भी "तिलचट्टा" की तरह एक पशु-प्रतीक नाटक है। मनुष्य के मन में स्थित पाशविक संस्कारों की अभिव्यक्ति के लिए ही नाटककार ने प्रतीक रूप में "तेन्दुआ" शीर्षक प्रयुक्त किया है। कोशकारों के अनुसार "तेन्दुआ" चीते की जाति का एक हिंसक पशु है[112] जिसे "लिओपार्ड" (Leopard)[113] कहा जाता है। "तेन्दुआ" की कुछ प्रमुख विशेषताएँ[114] इस प्रकार हैं-

1· उत्तर अफ्रीका, एशिया के पहाड़ों और बड़े-बड़े जंगलों में पाया जाने वाला तेन्दुआ बिल्ली के वर्ग का एक पशु है।
2· उसका वर्ण काला-कलूटा होता है।
3· वह अवसर वादी, चोरी-छिपे भक्ष्य पकड़ने वाला तथा द्रुतगामी होता है।
4· प्रज़जन क्रिया के लिए उसे किसी विशिष्ट मौसम या समय की आवश्यकता नहीं होती।
5· उसकी दृष्टि भेदक होती है।

छाया-चित्र दृष्टव्य है-

नाटक में मिसेज मदान के पास एक ऐसा तेन्दुआ है, जिसका वर्ण चमकीला, काला और आँखे हरी हैं तथा जो अपने सुन्दर और आकर्षक शरीर के बावजूद प्रकृति से क्रूर है।[115] रेनु राय के पास तेन्दुआ नहीं, पर तेन्दुए के समान्तर एक ऐसा संघर्षशील माली है, जिसमें तेन्दुए की कुछ विशेषताएँ हैं। वह आतंकवादियों के उस दल से संबंधित

है, जिस दल के सदस्य आतंक फैलाने के लिए बम विस्फोट करते हैं और जिन्होंने अदालत के किसी संतरी का गला काट दिया था।[116] नाटक में रेनु राय और मिसेज मदान द्वारा दी गई यातनाओं को वह एक बेजुबान पशु की तरह चुपचाप सहता रहता है। हो सकता है रेनु के प्रति उसके प्यार ने भी उसे यातनाओं को चुपचाप सहने के लिए विवश किया हो। कारण चाहे जो भी रहा हो, पर उसका इस प्रकार चुपचाप यातनाओं को सहना और पशु की तरह केवल काँपना या चीखना उसे पशु की कोटि में ला पटकता है। माली को यातनाएँ देने वाली रेनु राय और मिसेज मदान भी अपने सुन्दर और आकर्षक शरीर के बावजूद क्रूरता की दृष्टि से किसी तेन्दुए से कम नहीं है। इस प्रकार नाटक के मुख्य तीनों पात्रों में तेन्दुए की कुछ विशेषताएँ दृष्टिगोचर होती हैं। अतः प्रस्तुत नाटक का "तेन्दुआ" शीर्षक पूर्ण रूप से उचित है।

नाटक के शीर्षकों के अभिनव प्रयोग मुद्राराक्षस की प्रतिभा के परिचायक है।

<u>निष्कर्ष</u> -

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि -

* असंगत नाटकों की शिल्प-विधि पारम्परिक नाटकों की शिल्प-विधि से प्रचुर मात्रा में भिन्न है। अंक विभाजन की दृष्टि से भी मुद्राराक्षस के नाटकों में संगति नहीं है। कुछ नाटकों में अंक विभाजन है और कुछ में बिल्कुल नहीं है।
* मुद्राराक्षस के असंगत नाटकों में कथ्य महत्त्वपूर्ण नहीं है, महत्त्वपूर्ण हैं स्थितियाँ। मानव जीवन की त्रासदी उभारना ही उनके नाटकों का मुख्य प्रतिपाद्य है।
* उनके नाटकों के बहुसंख्य पात्र असामान्य (Abnormal) हैं, जो जीवन की विभिन्न विसंगतियों को ढोते हुए जैसे-तैसे जीवन यापन करते हैं।
* आलोच्य नाटकों में मुद्राराक्षस ने पात्रों के खंड जीवन को विभिन्न शैलियों के माध्यम से चित्रित किया है।
* मुद्राराक्षस के असंगत नाटकों की एक महत्त्वपूर्ण विशेषता संवाद-शिल्प और भाषाशैली है। पात्रों के क्रिया-व्यापार, उनकी विभिन्न मानसिक स्थितियाँ आदि को अभिव्यक्त करने के लिए उन्होंने संवादों के विभिन्न रूपों को और भाषा की विभिन्न शैलियों को अपनाया है। उनका यह संवाद तथा भाषा-शिल्प हिन्दी नाट्य साहित्य में अपने ढंग का अकेला है।
* नाटककार ने अपने नाटकों में लोकगीत, जागरण गीत तथा विडम्बनात्मक

गीत का प्रयोग कथ्य की आवश्यकता के अनुसार मार्मिक ढंग से किया है। जहाँ पारम्परिक नाटकों में संगीत का प्रयोग मुख्यतया मनोरंजन के लिए किया जाता है, वहाँ मुद्राराक्षस के नाटकों में संगीत का प्रयोग यातना देने के लिए हुआ है जिसका उत्कृष्ट उदाहरण "तेन्दुआ" नाटक है।

* नाटककार ने बिम्बों और प्रतीकों के माध्यम से मानव जीवन की विसंगतियों पर सांकेतिक शैली में प्रकाश डाला है। कुछ बिम्ब और प्रतीक जटिल तथा दुरूह हैं।

* मुद्राराक्षस के असंगत नाटकों में शीर्षकों के जो अभिनव प्रयोग हुए हैं वे कथ्यानुकूल, पात्रानुकूल तथा प्रतीकात्मक हैं। पशु-प्रतीक उनके नाटकों के शीर्षकों की एक नव्यतम उपलब्धि है।

संदर्भ -

1· डॉ·शांति मलिक, "हिन्दी नाटकों की शिल्प-विधि का विकास",प्र·सं·1971,पृ·4

2· डॉ·उषा सक्सेना, "हिन्दी उपन्यासों का शिल्पगत विकास", प्र·सं·1972, पृ·71

3· डॉ·गोविंद चातक, "आधुनिक हिन्दी नाटकःभाषिक और संवादीय संरचना", प्र·सं·1982, पृ·192

4· डॉ·रामशंकर त्रिपाठी,"साहित्य में पात्रःप्रतिमान और परिरेखन", प्र·सं·1987,पृ·3

5· मुद्राराक्षस,"तिलचट्टा" (ग्रंद बातें), दि·सं·1976, पृ·7

6· मुद्राराक्षस,"योर्स फेथफुली", सं·अनुल्लिखित, पृ·28

7· वही, पृ·60

8· मुद्राराक्षस, "मरजीवा", सं·अनुल्लिखित, पृ·24

9· वही, पृ·31

10· मुद्राराक्षस, "योर्स फेथफुली" सं·अनुल्लिखित, पृ·56-59

11· मुद्राराक्षस, "तेन्दुआ" प्र·सं·1975, पृ·41-42

12· वही, (स्वगत) पृ·19

13· वही, पृ·17

14· वही, पृ·32

15· डॉ·गोविंद चातक, "आधुनिक हिन्दी नाटकःभाषिक और संवादीय संरचना", प्र·सं·1982, पृ·32

16· मुद्राराक्षस, "मरजीवा", सं·अनुल्लिखित, पृ·51

17· मुद्राराक्षस, "तेन्दुआ" प्र·सं·1975, पृ·79-80

18· डॉ·गोविंद चातक, "नाट्यभाषा", प्र·सं·1981, पृ·71

19· मुद्राराक्षस, "योर्स फेथफुली",सं·अनुल्लिखित, पृ·34

20· डॉ·गोविंद चातक,"आधुनिक हिन्दी नाटक:भाषिक और संवादीय संरचना",प्र·सं·1982 पृ·202

21· वही, पृ·199

22· मुद्राराक्षस, "तेन्दुआ"(स्वगत) ,प्र·सं·1975, पृ·19

23· मुद्राराक्षस, "योर्स फेथफुली",सं·अनुल्लिखित, पृ·57-58

24· मुद्राराक्षस, "तेन्दुआ", प्र·सं·1975, पृ·81

25· मुद्राराक्षस, "योर्स फेथफुली"सं·अनुल्लिखित, पृ·33

26· डॉ·गोविंद चातक, "आधुनिक हिन्दी नाटक:भाषिक और संवादीय संरचना", प्र·सं·1982, पृ·198-199

27· मुद्राराक्षस,"मरजीवा" सं· अनुल्लिखित, पृ·35

28· मुद्राराक्षस, "योर्स फेथफुली" (भूमिका), सं· अनुल्लिखित, पृ·11-13

29· डॉ·गोविंद चातक, "आधुनिक हिन्दी नाटक:भाषिक और संवादीय संरचना", प्र·सं·1982, पृ·215

30· मुद्राराक्षस,"मरजीवा", सं· अनुल्लिखित, पृ·49-50, 60-61

31· मुद्राराक्षस, "तिलचट्टा", दि·सं·1976, पृ·65-75

32· मुद्राराक्षस, "तेन्दुआ", प्र·सं·1975, पृ·45

33· डॉ·गोविंद चातक, "नाट्यभाषा", प्र·सं·1981, पृ·87

34· मुद्राराक्षस, "मरजीवा", सं अनुल्लिखित, पृ·32

35· मुद्राराक्षस, "योर्स फेथफुली",सं·अनुल्लिखित, पृ·36-41

36· मुद्राराक्षस, "तेन्दुआ"(स्वगत), प्र·सं·1975, पृ·18

37· मुद्राराक्षस, "योर्स फेथफुली", सं·अनुल्लिखित, पृ·87-88

38· डॉ·गोविंद चातक, "आधुनिक हिन्दी नाटक:भाषिक और संवादीय संरचना", प्र·सं·1982, पृ·243

39· मुद्राराक्षस, "योर्स फेथफुली", सं· अनुल्लिखित, पृ·31,33,35,45,47,51,52,60,61, 65,67,72,73,86·

40· मुद्राराक्षस, "तेन्दुआ"(स्वगत), पृ·19-21

41· वही, पृ·22

42· मुद्राराक्षस,"मरजीवा",सं·अनुल्लिखित, पृ·41-45

43· मुद्राराक्षस,"योर्स फेथफुली" (भूमिका), सं·अनुल्लिखित, पृ·13

44· नेमिचंद्र जैन, "रंग-दर्शन", प्र·सं·1967, पृ·38

45· मुद्राराक्षस, "योर्स फेथफुली" (भूमिका"),सं·अनुल्लिखित, पृ·10

46· वही, पृ·9

47· संपा·नरनारायण राय, "असंगत नाटक और रंगमंच", (डॉ·चंद्र, "हिन्दी के असंगत नाटक और रंगमंच", लेख) प्र·सं·1981, पृ·128

48· मुद्राराक्षस, "तेन्दुआ", प्र·सं·1975, पृ·40-41

49· मुद्राराक्षस, "मरजीवा" (आकाशभाषित), सं·अनुल्लिखित, पृ·16

50· मुद्राराक्षस, "तेन्दुआ", प्र·सं·1975, पृ·52-53

51· मुद्राराक्षस, "योर्स फेथफुली", सं·अनुल्लिखित, पृ·36

52· मुद्राराक्षस, "तिलचट्टा", (चंद बातें), द्वि·सं·1976, पृ·13

53· वही, पृ·57

54· डॉ·गोविंद चातक, "आधुनिक हिन्दी नाटक:भाषिक और संवादीय संरचना", प्र·सं·1982, पृ·194

55· मुद्राराक्षस, "तेन्दुआ", प्र·सं·1975, पृ·68

56· डॉ·गोविंद चातक, "आधुनिक हिंदी नाटक:भाषिक और संवादीय संरचना",प्र·सं·1982पृ·195

57· मुद्राराक्षस, "तेन्दुआ", प्र·सं·1975, पृ·35

58· वही, (स्वगत), पृ·23-24

59· वही, पृ·58

60· डॉ·गोविंद चातक,"आधुनिक हिन्दी नाटक:भाषिक और संवादीय संरचना", प्र·सं·1982, पृ·227

61· मुद्राराक्षस, "मरजीवा" सं·अनुल्लिखित, पृ·46

62· मुद्राराक्षस, "योर्स फेथफुली", सं·अनुल्लिखित, पृ·88

63· डॉ·गोविंद चातक, "आधुनिक हिन्दी नाटक:भाषिक और संवादीय संरचना", प्र·सं·1982, पृ·229

64· मुद्राराक्षस, "मरजीवा", सं·अनुल्लिखित, पृ·36

65· मुद्राराक्षस, "योर्स फेथफुली" सं·अनुल्लिखित, पृ·33

66· मुद्राराक्षस, "मरजीवा", सं·अनुल्लिखित, पृ·41

67· मुद्राराक्षस, "तिलचट्टा", द्वि·सं·1976, पृ·70

68· मुद्राराक्षस, "मरजीवा", सं·अनुल्लिखित, पृ·41

69· मुद्राराक्षस, "योर्स फेथफुली", सं·अनुल्लिखित, पृ·44

70· मुद्राराक्षस, "तिलचट्टा" द्वि·सं·1976,पृ·69

71· मुद्राराक्षस, "तेन्दुआ", प्र·सं·1975, पृ·48

72· मुद्राराक्षस, "मरजीवा", सं·अनुल्लिखित, पृ·67

73· मुद्राराक्षस, "योर्स फेथफुली", सं·अनुल्लिखित, पृ·39

74· मुद्राराक्षस, "तिलचट्टा", द्वि·सं·1976, पृ·57·

75· मुद्राराक्षस, "तेन्दुआ", प्र·सं·1975, पृ·29

76· वही, (स्वगत), पृ·18

77· डॉ·गोविंद चातक, "आधुनिक हिन्दी नाटक:भाषिक और संवादीय संरचना", प्र·सं·1982, पृ·99

78· मुद्राराक्षस, "मरजीवा" सं·अनुल्लिखित, पृ·46

79· वही, पृ·69

80· डॉ·शांति मलिक, "हिन्दी नाटकों की शिल्प-विधि का विकास", प्र·सं·1971, पृ·506-507

81· मुद्राराक्षस, "योर्स फेथफुली", सं·अनुल्लिखित, पृ·61

82· डॉ·वशिष्ठ नारायण त्रिपाठी, "नाटक के रंगमंचीय प्रतिमान", प्र·सं·1991, पृ·121

83· वही, पृ·31,50,54,76-78,80-82,92

84· डॉ·वशिष्ठ नारायण त्रिपाठी, "नाटक के रंगमंचीय प्रतिमान", प्र·सं·1991,पृ·121

85· मुद्राराक्षस, "तेन्दुआ", प्र·सं·1975, पृ·61

86· वही, पृ·65,68

87· वही, पृ·69,70,73

88· डॉ·ओउम प्रकाश अवस्थी, "नयी कविता:रचना प्रक्रिया", प्र·सं·1972,पृ·104

89· डॉ·मृदुला गुप्ता,"बच्चन के काव्य में बिम्ब-योजना", प्र·सं·1986, पृ·9-10

90· डॉ·केदारनाथ सिंह, "हिन्दी के प्रतीक नाटक और रंगमंच", प्र·सं·1985,पृ·22

91· संपा·डॉ·विजयकांत धर दुबे, "साठोत्तरी हिन्दी नाटक" (ज्ञानसिंह मान, "साठोत्तरी हिन्दी नाटकःप्रतीकात्मक संदर्भ, लेख.) प्र·सं·1983,पृ·74

92· मुद्राराक्षस, "योर्स फेथफुली" सं·अनुल्लिखित, पृ·28

93· डॉ·श्रीमती रीताकुमार, "स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी नाटकःमोहन राकेश के विशेष संदर्भ में", प्र·सं·1980, पृ·135

94· मुद्राराक्षस, "तिलचट्टा", दि·सं·1976, पृ·51-52

95· डॉ·लक्ष्मीराय, "आधुनिक हिन्दी नाटकःचरित्र-सृष्टि के आयाम", प्र·सं·1979, पृ·458

96· मुद्राराक्षस, "तिलचट्टा", दि·सं·1976, पृ·61-62

97· डॉ·चंद्रशेखर,"समकालीन हिन्दी नाटक : कथ्य चेतना", प्र·सं·1982, पृ·417

98· डॉ·सुन्दरलाल कथूरिया, "समसामयिक हिन्दी नाटकःबहुआयामी व्यक्तित्त्व",प्र·सं·1979 पृ·101-102

99·· मुद्राराक्षस, "तेन्दुआ", प्र·सं·1975, पृ·29

100· वही, (स्वगत), पृ·23

101· डॉ·सुन्दरलाल कथूरिया, "समसामयिक हिन्दी नाटकःबहुआयामी व्यक्तित्त्व", प्र·सं·1979, पृ·101

102· डॉ·लक्ष्मीराय,"आधुनिक हिन्दी नाटकःचरित्र-सृष्टि के आयाम" प्र·सं·1979,पृ·460

103· डॉ·शेखर शर्मा,"समकालीन संवेदना और हिन्दी नाटक",प्र·सं·1988,पृ·240

104· डॉ·दशरथ ओझा, "आज का हिन्दी नाटकःप्रगति और प्रभाव", प्र·सं·1984,पृ·104

105· डॉ·सत्यवती त्रिपाठी,"आधुनिक हिन्दी नाटकों में प्रयोगधर्मिता",प्र·सं·1991, पृ·129

106· मुद्राराक्षस, "तेन्दुआ", प्र·सं·1975, पृ·62-63

107· मुद्राराक्षस,"मरजीवा",सं·अनुल्लिखित, पृ·66-67

108· मुद्राराक्षस, "योर्स फेथफुली",सं·अनुल्लिखित, पृ·66-67

109· Editor, Maurice and Robert Burton, 'Encyclopedia of the Animal Kingdom',Edition 1976,Page,84-85.

110· डॉ·केदारनाथ सिंह,"हिन्दी के प्रतीक नाटक और रंगमंच",प्र·सं·1985,पृ·235 - 236·

111· मुद्राराक्षस, "तिलचट्टा", दि·सं·1976, पृ·62·

112· संपा·रामचंद्र वर्म्मा, "मानक हिन्दी कोश", दूसरा खण्ड, प्र·सं·1965, पृ·573

113· संपा·डॉ·ब्रजमोहन/डॉ·बदरीनाथ कपूर, "मिनाक्षी हिन्दी अंग्रेजी कोश", प्र·सं·1980, पृ·331

114· Editor,Dr.David Macdonald,"The Encyclopaedia of Mammals : 1, Edition,1984= Page,44-45.

115· मुद्राराक्षस "तेन्दुआ", प्र·सं·1975, पृ·66

116· वही, पृ·32-33